विमुक्त जातियों की स्थिति

बाल अधिकारों पर केन्द्रित
बच्चों, युवाओं और वयस्कों के मध्यस्त कार्यशाला

भोपाल

8–9 जनवरी, 2018

विषय सूची

कार्यशाला की पृष्ठभूमि

1857 के विद्रोह के बाद ब्रिटिश सरकार को भारतीय उपमहाद्वीप को इस तरह संभालने की आवश्यकता पड़ी कि वापस ऐसी क्रांति उठने की संभावनाएं खत्म हो जाए। देशज सैनिकों की ताकत को खत्म करना, जिसमें महाराणा प्रताप की आदिवासी योद्धाओं की निडरता को तोड़ना एक एहम काम था। इमारती लकड़ियों के लिए जंगलों तक पहुँच की ज़रूरत के साथ–साथ करों के संग्रहण की भी आवश्यकता थी। ब्रिटिश औपनिवेशिक शक्तियां घुमंतू समुदायों को, एक इलाके से दूसरे इलाके तक खबर पहुँचाने और ब्रिटिश साम्राज्य के खिलाफ प्रतिरोध की भावना फैलाने के शक के कारण, संदेह की नजर से देखने लगे। इस तरह की पृष्ठभूमि में ब्रिटिश औपनिवेशिक सरकार 1871 में आपराधिक जनजातीय अधिनियम कानून लाया। यूरोपीय मानसिकता का यह कानून घुमंतू समुदायों के प्रति उन पूर्वाग्रहों से ग्रसित था, जो पूर्वाग्रह औपनिवेशिक शासकों के रोमन जिप्सी और अन्य घुमंतू समुदायों प्रति थे। इस कानून ने इस क्षेत्र में रहनेवाले 150 से अधिक समुदायों के जीवन की दशा को बदल दिया। उन्हें संदेह के आधार पर गिरफ्तार किया जा सकता था और उनके आवागमन पर बारीकी से नज़र रखी जा रही थी। इस कानून में एक व्यक्ति को केवल किसी खास समुदाय में पैदा होने के लिए अपराधी माना गया था।

स्वतंत्र भारत ने एक समतावादी समाज के निर्माण की कल्पना की थी। 1952 में अपराधिक जनजातीय अधिनियम को निरस्त कर दिया गया था और पहले जिन्हें आपराधिक जनजातियों के नाम से जाना जाता था, उनके लिए पूर्व–अपराधिक या डीनोटिफाइड जनजातियों (डी.एन.टी.) की नई शब्दावली का प्रयोग किया जाने लगा।

मध्यप्रदेश में निवास करने वाले, 31 घुमंतू व अर्ध–घुमंतू समुदायों और 20 डीनोटिफाइड जनजातियां की पहचान की गई है। मध्य प्रदेश सरकार ने राज्य के डीनोटिफाइड समुदायों पर पर्याप्त ध्यान देने के लिए पूर्णतः उनके लिए समर्पित, एक अलग विभाग का गठन किया था। 22 जून 2011 को घुमंतू व अर्ध–घुमंतू विभाग का गठन किया गया था। हाल ही, दिसंबर 2011 में, मुख्यमंत्री, शिवराज सिंह चौहान ने घोषणा की कि घुमंतू समुदायों को अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति के दायरे में लाया जाएगा। हालाँकि ज़मीनी स्तर पर अभी भी स्थितियां बदली नहीं हैं।

डी.एन.टी. आयोग और अन्य रिपोर्टों से पता चलता है कि इन समुदायों के बच्चों के अधिकारों, मुख्य रूप से भागीदारी का अधिकार, जीवन जीने का अधिकार, विकास का अधिकार और संरक्षण का अधिकार, के प्रति सरकारों का बहुत ही समझौतावादी नज़रिया रहा है।

पुलिस द्वारा पुलिस थाने में लाए गए पारधी बच्चों के साथ, हिरासत में हिंसा और अपमानजनक भाषा का इस्तेमाल किया जाता है। डी.एन.टी. आयोग ने एक जवान लड़की के साथ पुलिस थाने में यौन उत्पीड़न और उसकी रिहाई के लिए जबरन वसूली के लिए पैसे की मांग के बाद आत्महत्या

के मामले की जांच करके रिपोर्ट दी कि डीनोटिफाइड समुदायों के मानवाधिकारों की स्थिति बहुत ही भयावह है।

डी.एन.टी. समुदायों की शैक्षणिक स्थिति और अन्य पहलुओं को समझने के लिए किए गए हालिया अध्ययन से पता चलता है कि वर्तमान में मध्यप्रदेश में इन समुदायों के 27 प्रतिशत लोग ही शिक्षा से जुड़े हुए हैं। विमुक्त समुदायों के अंदर भी फर्क हैं; इस रिपोर्ट में शिक्षा से जुड़े बच्चों की संख्या और भी कम है – लोहारपीटा (9.8 प्रतिशत), नायका भील और पारधी (लगभग 15 प्रतिशत) इत्यादि। एक अध्ययन किया गया है जो, इन कमज़ोर समूहों के बच्चों के साथ स्कूलों में होनेवाले भेदभाव के बारे में बताता है।

इसलिए घुमंतू समुदायों के बच्चों की स्थिति को जानने के लिए घुमंतू समुदायों के लोगों व बच्चों के साथ एक कार्यशाला आयोजित की जिसमें विभिन्न गतिविधियों और विचारपूर्ण चर्चा के माध्यम से लोगों ने अपने अनुभव साझा किए। इस कार्यशाला में कई समुदायों के करीबन 60 प्रतिभागियों ने भाग लिया। पारधी, कंजर, सपेरा, कालबेलिया, बंजारा, सांसी समंइास के लोग सीधे शामिल थे और बेड़िया बाछरा समुदास के बीच कार्यरत संस्था के कार्यकर्ता उपस्थित थे और उनके समाज की कुछ झलकें सामने लाए। इस कार्यशाला में विभिन्न सरकारी विभागों के प्रतिनिधि भी बुलाए गए थे ताकि सरकार से एक सीधा संवाद हो सके। एम.पी.एच.आर.सी., एस.सी.पी.सी.आर. और डी.एन.टी. विभाग के सम्मानित अधिकारियों ने सीधे ही लोगों को सुना।

लोगों की पहचान से जुड़े सकरात्मक पहलुओं से शुरू करते हुए हम जीवन में आ रहे बदलाव के आयामों को देखने की कोशिश की। इसके साथ साथ वर्तमान ज़िन्दगी के विभिन्न आयामों पर खास सत्र लिए गए। बच्चों की ज़िन्दगी में क्या नए कदम की उम्मीदे हैं और क्या वास्तविकताएं रोज़मर्रा की होती हैं – यह सब लोगों की भागीदारी से साझा हुआ। वक्त की कमी से समाज में महिलाओं की स्थिति पर अलग से सोचा गया सत्र नहीं हो पाया किन्तु सभी सत्रों के अंदर महिलाओं और बच्चों पर खास बातें निकाली गईं।

हम कार्यशाला की कार्यवाही को पेश कर रहे हैं। हमें उम्मीद है कि इस कार्यशाला की सीख हमें (सरकारी और गैर सरकारी एजेंसियों) डीनोटिफाइड समुदाय के बच्चों से जुड़े मुद्दों पर बेहतर ढंग से काम करने में मदद करेंगी और हम बाल अधिकारों को हर अंतिम बच्चे के लिए सुनिश्चित करने के लिए प्रतिबद्ध रहेंगे।

बदलाव के आयाम

मीटिंग की शुरुआत 'बदलाव' की चर्चा से करी। साझे समूह में सभी से सवाल रखा गया कि उनको उनके समाज और आस–पास के माहौल में गए कुछ दशकों – दस–बीस साल में क्या बदलाव नज़र आते हैं। लोगों के कई जवाब आने लगे जिनमें जीवन की नकारात्मक परिस्थितियां हावी थीं। कई तरह से सवाल ऐसा पूछा गया कि ऐसी बातें भी नज़र आयें जो शायद बदलाव की उम्मीद देती हों (अगर बदलाव जीवन में नहीं भी उतरा हो)। लेकिन फिर भी कुछ ठोस सकारात्मक नहीं पेश हो पाया। कुछ उत्तरों को यहाँ प्रस्तुत कर रहे –

पहले बैरागढ़ में रहते थे । वहां सिंधियों ने हमारी बस्ती तोड़कर हमे गांधीनगर में बसाया। काम काज करने के लिए दूरियां बढ़ गईं। वहां पुलिस ऐसे परेशान नहीं करती थी और यहाँ रोज परेशानी होती है। यहाँ आकर बहुत लोग मर गए।

हमारे गाँव में रोड बन गयी है लेकिन वहां गिट्टी की खदान थी इसलिए रोड बनाई। पारधी और कालबेलिया समाज की ज़मीने इसमें चली गईं।

गाँव में पहले भी पानी भरने की दिक्कत थी, और अभी भी वैसी ही मुश्किल है।

बस्तियों में और अन्य जगहों से लोग आकर बसे हैं।

हमारे पुश्तैनी पारंपरिक कामों पर रोक लग गयी है। इस कारण गए सालों में तो और मुश्किलें आ गयी हैं।

मुस्लिम नवाबों ने और इंदिरा गाँधी ने ज़मीन देकर बसाने की कोशिश करी थी लेकिन गाँव में पानी न हो, तो भटकना पड़ता ही है। बड़े लोगों ने हमारी ज़मीने भी इन सालों में ले ली।

एहसान नगर पहले गाँव जैसा था, अभी शहर जैसा हो गया है। हमारी बस्ती के चारों तरफ बिल्डिंग बन रही है इसलिये बाउंड्री बना दी है।

शराब पीना बहुत बढ़ गया है। पहले देसी दारु ठीक थी, लेकिन अभी मुश्किल है।

योजनाओं का मालूम हुआ है, लेकिन पेंशन नहीं मिलती हम लोंगों को।

कुछ छिटकी सी आवाज़ों ने बताया कि उनके समाज में शिक्षा और बाल विवाह की परिस्थितियां थोड़ी बहुत किन्ही युवकों के लिए बदल रही हैं। बंजारा समुदाय की लड़कियां से बात आई कि पहले बाल–विवाह ज़्यादा होता था, अभी थोड़ा कम हुआ है।

उपस्थित समूहों के सहभागियों से मध्य प्रदेश की विमुक्त जातियों की वास्तविकता ऐसी ही समझ आती है कि जीवन थम गया है या ज़्यादा गढ़ढे में धकेला जाता गया है।
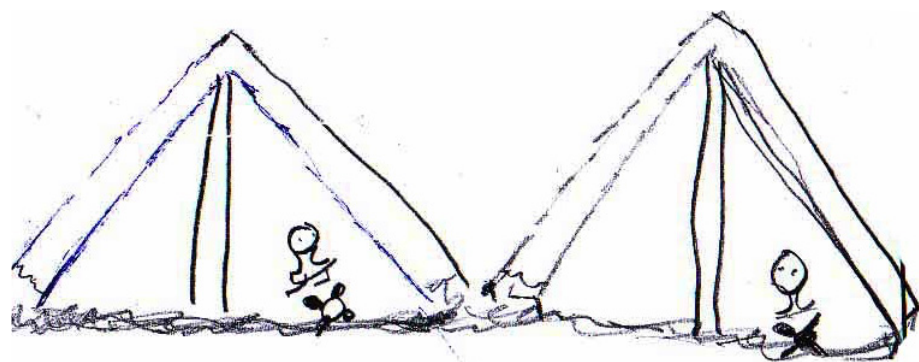
विमुक्त समुदायों की बसाहटों की भौगोलिक स्थिति

लोगों ने अपनी बस्तियों का नक्शा बनाते हुए अपनी बसाहटों की परिस्थितियां सामने रखीं।

विमुक्त जाति के डेरे दूसरे समुदायों से अलग बसे हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में उनके घरों के आसपास कोई ओर दूसरी समाज के घर नहीं है। शहर में यह स्थिति थोड़ी अलग है, लेकिन यहां भी समुह और जातिवार ही लोग बसे हैं। गांव में बसाहट उनकी जाति के नाम से बनाई गई है– बिजोरी टपरा या ईरानी मोहल्ला या पारधी गली। कुछ दूरी पर दूसरे समाज के लोग रहते हैं। भोपाल के ईश्वर नगर में ठाकुर के घर ज़्यादा हैं और कालबेलिया के केवल 20 घर हैं। ये लोग एक असुरक्षा के भाव में रहते हैं क्योंकि एक ताकतवर जात का दूसरे अन्य जात पर दबदबा बना रहता है।

चित्रों में सुविधाओं को दर्शाते हुए यह समझ आया है कि खासतौर गांवों में इन समुदायों की बसाहटों में बिजली, पानी व सड़क की सुविधाएं ठीक नहीं हैं। लोगों की पहुँच न होना और (जहाँ हस्तक्षेप नहीं हुआ होस्थानीत पार्षद और सरपंच में उनके प्रति पूर्वाग्रह और दूरियां बनी ही हुई हैं। बिजोरी टपरा से दो किलोमीटर आगे तरावली में जहां सरपंच रहता है वहां बिजली पानी सड़क आदि सभी सुविधाएं हैं जबकि इस कंजर बसाहट में कुछ भी नहीं है।

घरों की बनावट– ज़्यादातर घर कच्चे मिट्टी व पन्नी के बने हुए है कुछ ईटों के बने है। कुछ बस्तियों में तो घास और लकड़ी से बनी झोपड़िया हैं।
बिजोरी टपरा में घास और लकड़ियों के घर बने है कुछ घास की झोपड़िया है। ईश्वर नगर व झागरिया में बंजारा और कालबेलिया समुदाय के लोग निवास करते है वहां के घर की दीवारे ईंट की और छत टीन की बनी हुई है।
सालों से लोग रहते हैं और जगह एक तरह से स्थायी है लेकिन कई घरों पर छत पर पतरे और प्लास्टिक की पल्लियां डाली हैं।

बिजोरी टपरा में प्रधानीमंत्री आवास योजना के तहत 5 मकान बने हैं जबकि 200 से ज़्यादा आवेदन जमा हुए थे। क्यों एक का आवेदन पास हुआ है और दूसरे का खारिज – इसका कोई कारण लोगों के सामने नहीं है।

आंगवड़ी और शिक्षा की व्यवस्था – ज़्यादातर बसाहटों के आसपास सरकारी प्रायमरी स्कूल (पहली से पांचवी कक्षा) हैं लेकिन कितने दिन, कितने घंटे खुलते हैं, यह दूसरी बात है। आंगनवाड़ी की व्यवस्था कई बसाहटों में नहीं है; शहर में भी एहसान नगर, बंजारी बस्ती में पारधी मौहल्लों में आंगनवाड़ी नहीं हैं और दूसरी जगहों में प्रयासों के बाद ही कुछ बच्चों का इस शासकीय व्यवस्था से जुड़ने की सम्भावना बढ़ी हैं।

पानी की व्यवस्था – राजीव नगर, भोपाल की पारधी बसाहट को छोड़कर सभी सहभागियों की बसाहटों में पानी की कुछ मुश्किले हैं। बंजारी में टेंकर से पानी खरीदते हैं। नई दिल्ली में पीने के पानी के लिए हेंडपम्प है जिससे लोग पानी भरकर लाते है। पूरे गांव में 1 ही हेंडपम्प है। कुछ एक दो घरो में खुद से कुआं खोदकर पानी की व्यवस्था की है। तरावली में पानी की बहुत मुश्किल है और लोगों को कोसों दूर से पानी लाना पड़ता है।

पहुँच मार्ग – नई दिल्ली का गांव नरसिंहगढ़ बायपास से 12 किलोमीटर दूरी पर है। पचोर से सड़क पर 1 कि.मी. की दूरी पर है। मेन रोड से बस्ती पहुंच मार्ग कच्चा है। तरावली, बिजोरी (कंजर) बैरसिया (इमला थाना) के आगे, बैरसिया रोड से 2 कि.मी. अंदर बिजोरी समुदाय के लोग रहते हैं। तरावली जाने के लिए कोई बस का साधन नहीं है। तरावली जाने के लिए कच्चा रास्ता है। बस्ती के लोग 8 किमी दूर बाज़ार जाते है। वहीं से राशन लाते है। भोपाल शहर में स्थित एहसान नगर चारों तरफ दीवार से घिरा है और बारिश में तो पानी भरे पुराने बनाए गढ्ढों में लोग गिर जाते हैं।
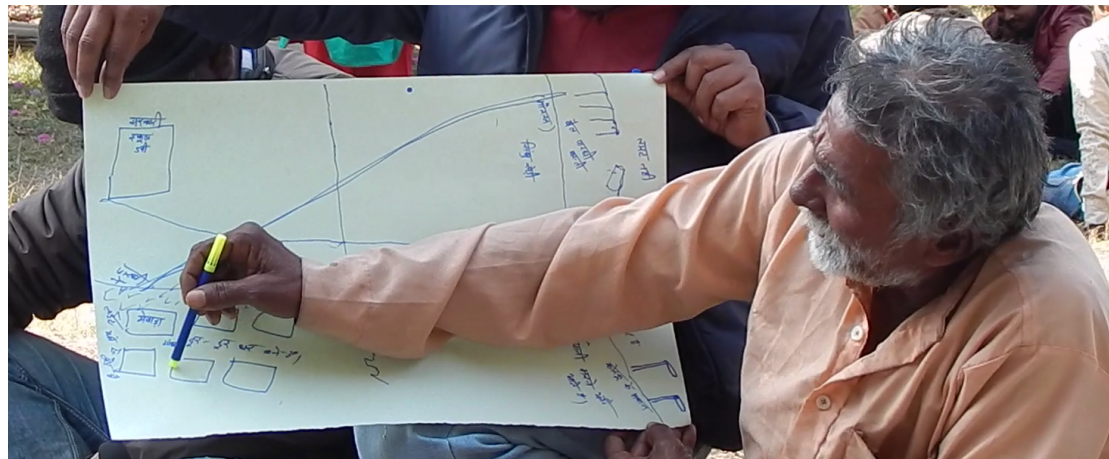
विमुक्त जातियों की संस्कृति

कार्यशाला में मध्यप्रदेश के विभिन्न जिलों से आए विमुक्त और घुमक्कड़ जनजाति समुदाय के लोगों ने अपनी–अपनी संस्कृति और पहचान को बताया। इस सत्र को कार्यशाला के शुरूआत में ही लिया था ताकि हर व्यक्ति अपने नाम/जगह के परिचय के साथ अपने समुदाय की खासियत को भी सामने रख सके। छोटे जातिगत समूहों में बंटकर यह गतिविधि की गई।

लोग अपनी पहचान और संस्कृति को समूह में बताते हुए गौरवान्वित महसूस कर रहे थे, बेंड़िया और बाछरा समुदाय के बीच कार्य भी शामिल हुए जबकि वर्तमान समय में हर विमुक्त और घुमक्कड़ समुदाय अपनी नकारात्मक छवि और गलत पहचान के साथ अपना जीवन जीने को मजबूर है। पुराने समय में इन सभी समुदायों के अपने अपने काम धंधे थे, जिसके वजह से वे एक बेहतर ज़िन्दगी गुज़र बसर कर पाने में समर्थ थे।
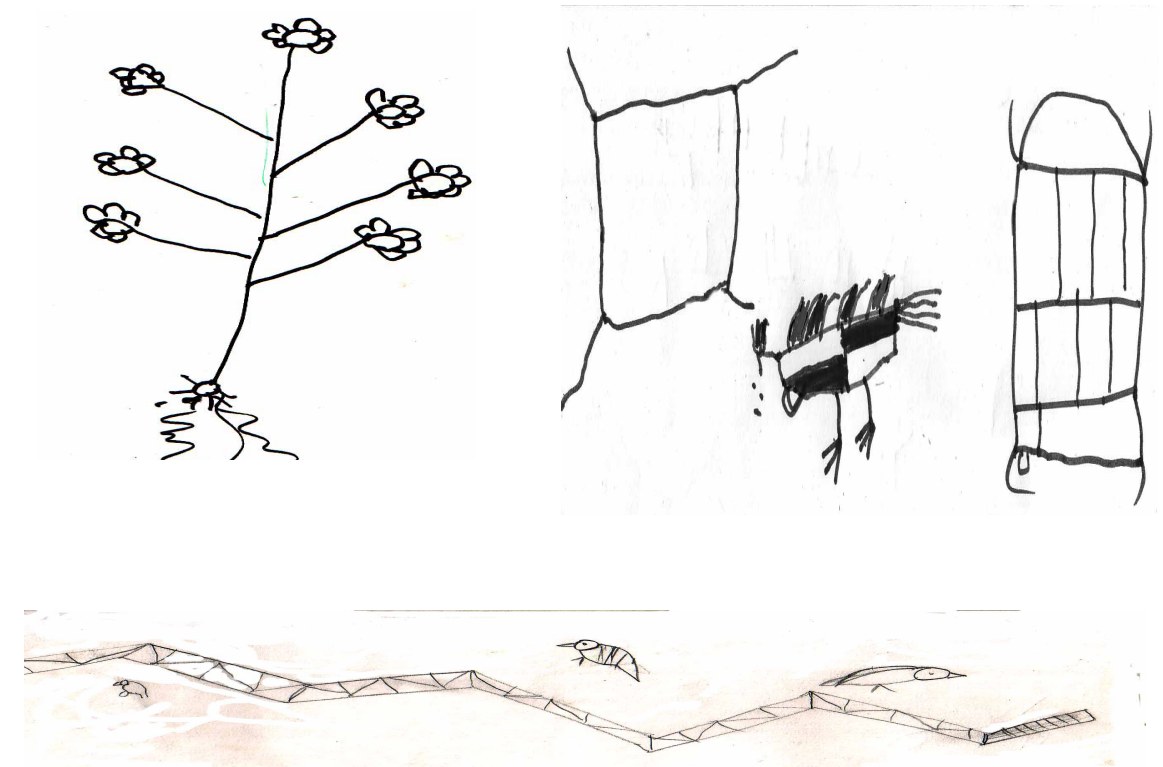
पारधी समुदाय – हम बैल पारधी हैं, बैल ही हमारी पहचान है। हम लोग बैल पर अपना सामान लाद के एक जगह से दूसरी जगह आना जाना किया करते थे। अपने बैल को बहुत ही अच्छे से सिखाते थे; वे बैल को रस्सी से नहीं बांधते थे। बैल उनके इशारे से चलता था।

हमारे पूर्वज बहुत अच्छे से जानवरों को प्रशिक्षित करते थे। ये हमारे पूर्वजों का हुनर था। हमारे पूर्वज राजा–महाराजों के सन्देश एक जगह से दूसरी जगह लेकर जाया करते थे। हमारे दादे–परदादे बैल से डाक लाने लिजाने का काम करते थे। इस वजह से उन्हें लम्बी–लम्बी यात्राएं करनी पड़ती थी।

लम्बी लम्बी यात्राओं के दौरान हमारे पूर्वज अलग अलग गाँवों में अपने डेरे डालते थे। वे जंगलों से तीतर खरगोश पकड़ते थे। तीतर खरगोश पकड़ने के लिए जाल बनाना हमारे लोग बहुत अच्छे से जानते हैं, इस जाल को हम खंदारा बोलते हैं। *खंदारा हमारी पहचान है।* शादी ब्याह मे भी खन्दारे को हम पूजते हैं।
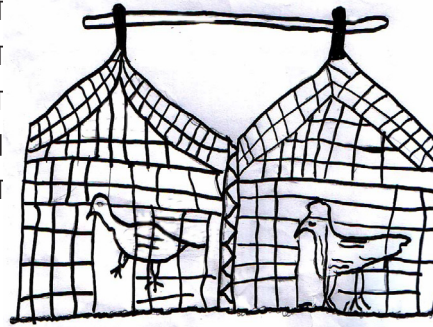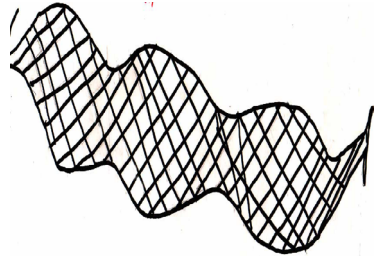
हमारे दादा परदादा लोग जब बाहर यात्राओं पर रहते थे तो वह मातामाई की मूर्ती की जगह खंदारे की ही पूजा करते थे और आज भी पूजते हैं। हमारे लोग अपने घरों में तीतर को प्रशिक्षित करते हैं; ये प्रशिक्षित तीतर जंगल में दूसरे तीतरों को पकड़ने में मदद करते हैं। हमारी जाति के लोग जंगलों में रहते थे, उन्हें बहुत सारी जड़ी बूटियों के बारे में पता था। हमारे समुदाय की महिलायें गाँव गाँव जाकर जड़ी बूटियां, छोटे बच्चो की माला बेचती थीं। जंगल हमारी पहचान थी, जंगल से बेदखल होने से जड़ी बूटियों का कौशल भी खतम हो गया। जंगलों से खदेड़े जाने के बाद हमारे लोगों के पास शहर में कचरा चुनने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचा। आज कचरा चुनना हमारी पहचान हो गई है।
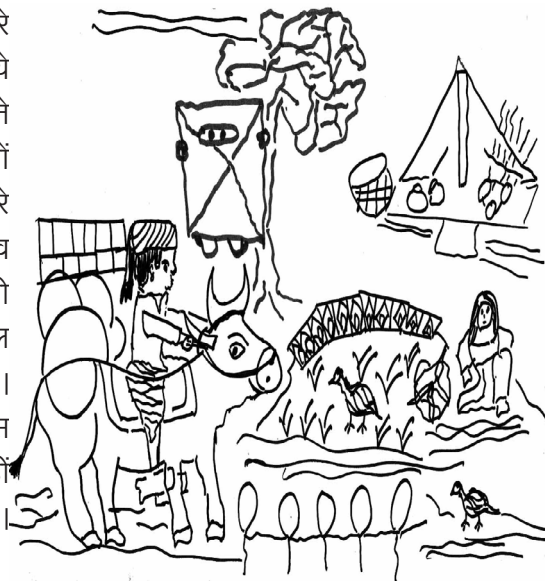
बंजारा समुदाय – आज हमारी पहचान पत्थर तोड़ने वाले समुदाय के रूप में होती है। पहले हमारे पूर्वज कुंए और बावड़िया बनाते थे। राजा महाराजा हमे काम पर बुलाते थे। बावड़ियों में लगने वाले पत्थरों को तराशने का काम हमारे पूर्वज किया करते थे। हमारे काम का बहुत सम्मान होता था। *पत्थर ही हमारी पहचान है।* आज हम जहां रहते हैं, वहां आसपास के लोग हमें लड़ाई झगड़े वाली जाति कहते है लेकिन यह सच नहीं है।
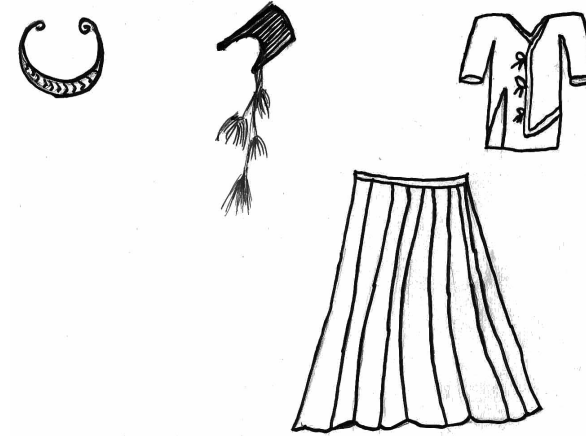
हम बंजारे अपनी वेशभूषा से पहचाने जाते हैं। हमारे समुदाय की औरते ब्लाउज, घागरा, दुपटटा और बड़े बुजुर्ग धोती कुरता, पगड़ी पहनते है। छोटे बच्चों को गले मे हस्लि पहनाते हैं जो कि चांदी की धातु की बनी होती है।

नट समुदाय – हमारे जाति की पहचान ढोल बजानेवालों के रूप में होती है, *ढोल और नगाड़े हमारी पहचान है।* पहले रस्सी पर चलते थे और लोगों का मनोरंजन करते हुए कमाते थे। अब हमारे समुदाय के लोग शादियों में ढोल बजाते हैं। हमारे साथ छुआछूत की जाती है। शहर आने के बाद हमारे बच्चे और महिलाएं कचरा चुनने का काम करने लगे; अब यही हमारी पहचान है।
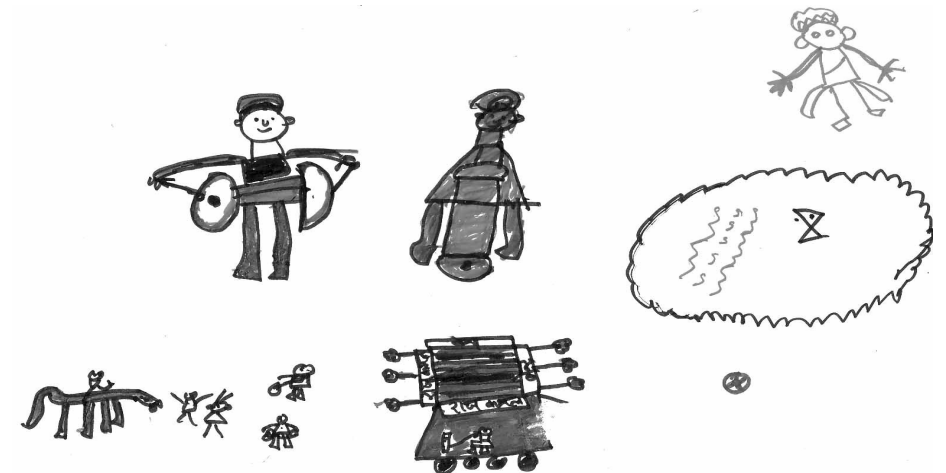
कंजर समुदाय – *महुआ हमारी पहचान है,* महुआ से दारु बनाना और बेचना हमारा धंधा है, इसी से हमारी ज़िन्दगी की गाड़ी चलती है। हम दारु की भट्टी को माता समझते हैं और मोर को हम पूजते हैं। दिवाली के त्यौहार पर हम मोर की पूजा करते हैं। मोर हमारे समुदाय के लिये बहुत खास है। मोर ही हमारी गौमाता है। साथ ही मोर की कहानी भी बताई। 30–40 रूपये मे महुआ की दारु बेचते हैं ओर अपनी ज़िंदगी जी रहे हैं। जब कभी कुछ कमाई नही होती तो दारु पीकर ही अपनी भूख मि. टाते है। उस पर पुलिस हमें हमेशा शक की बिनाह पर पकड़ लेती है। हमें तो इतना बेईज़्ज़त करते है कि हमारी जात को ही गाली के तौर पर उपयोग करते हैं। यह हम लोगों को बहुत ठेस पहुँचाता है।

साँप

सपेरा समुदाय – *बीन और सांप से हमारी पहचान है।* हमारे परदादा लोग जंगल जाकर सांप को पकड़ने जाते थे। सांप के ज़हरीले दांतों को तोड़ देते थे ताकि ज़हर का खतरा न रहे। हम लोग गाँव गाँव घूमकर सांप का खेल दिखाकर अपना गुजारा किया करते थे। लेकिन आजकल सांप को पकड़ने के खिलाफ कड़े कानून बने है; जिस कारण हमारी यह पहचान खतम हो गई है। सांप न पकड़ पाने के कारण अब हमारा समुदाय भीख मांगने को मजबूर है। बच्चे और महिलाएं मंदिरों पर, बाज़ार में मांगते है, कुछ युवा और महिलाएं शनिवार को शनि महाराज बनकर मांगते है; अब यही हमारी पहचान बनती जा रही है। हमे कालवबेलिया भी बोलते हैं।

बिन

पिटारी
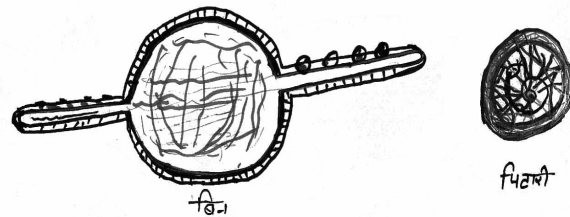
पूर्वाग्रहों से ग्रस्त विमुक्त जातियां

बैठक में बड़ों से बातचीत हुई कि क्या उन्होंनें अपने प्रति कुछ नकारात्मक सुना या महसूस किया है; ऐसा जो उनको लगता हो कि उनके जाति से जुड़ा है। लोगों ने खुलकर ऐसे एहसास को साझा किया। क्या यह अनुभव सच्ची के हैं और इतने आम हैं – हाँ, इन कड़वे अनुभवों को हम रोज़ जीते हैं; कभी आसूं तो कभी दर्द और व्यंग्य से बाते बताईं युवाओं और वयस्कों ने।

लोगों ने इतनी बातें बताईं जो कि दिखाती हैं कि समाज किस तरह इन समुदायों के साथ पेश आता है और किस तरह उनके स्व–सम्मान को ठेस पहुँचाता है। इन जातियों के प्रति समाज में व्याप्त पूर्वाग्रह की वजह से उनका जीवन गरीबी से अलग एक और कड़वाहट और आक्रोश से भर गया है, इससे बाहर निकलने की छटपटाहट इन समुदायों में स्पष्ट देखी जा सकती है।

भेदभाव सब जगह होता है
- स्कूल
- बाज़ार
- पुलिस–थाना
- बड़े घरों में
- काम की जगह
- सरकारी दफ्तरों में

जब मैं स्कूल में पढ़ता था तो मेरी मेडम कहती थी "तुम पारधी कभी नहीं सीख सकते तुम तो बिल्ली के गू के जैसे हो जो न लीपने के काम का और न ही पोतने के काम का", बहुत बुरा लगता था।

पारधी जाति मे पैदा ही नहीं होना था; बड़ी जात मे पैदा होना था।

आखिरकर मैने अपना गाँव ही छोड़ दिया।

जहाँ रहती हूँ, वहाँ के आसपास के लोग छीत करते है एक बंगले पर काम करना शुरू किया था पर पारधी जाति की हूं किसी ने बता दिया, मेरा काम छूट गया। हमारी जाति को हमको चोर ही समझते हैं।

शादी ब्याह के काम में खाना बनाने के लिये लेकर जाते लेकिन वहां जाकर बर्तन धोने के काम पर बिठा देते हैं।

हम लोग की बहु–बेटी कोई गहने, मंगलसूत्र पहन ले तो ताने मार मार के कान सुजा देते हैं क्योंकि गरीब जाति के हैं।

नये कपड़े नहीं पहन सकते। अगर बाज़ार हाट मे होते है, तो वहां भी हमें जाति बोध करते हुए कहते है कंजर, पारधी लोग कब से बाज़ार करने आने लगे।

इन्हें तो फ्री का माल चाहिए होता है; इनको कामधन्धा क्यों चाहिए।

हराम की कमाई ही चाहिए होती है।

गाँव मे बकरी चराने की जगह पर भी पटेल लोग चिल्लाते थे; पारधी के जानवर यहां नही चरेंगे। पारधी इंसानो को जगह नहीं है न ही उनके जानवरों के लिये जगह है।

हम लोगों को कुंए से पानी नहीं लेने देते थे, बोलते हैं दूर हो जाओ तुम लोग।

उपरोक्त सभी चर्चा विमुक्त समुदायों के प्रति समाज का नज़रिया बताती है जो बहुत ही खराब है। इन समुदायों को मुख्यधारा का हिस्सा ही नहीं समझा जाता। जिससे यह समझ आता है जिन जगहों पर हम सब जा रहे होते हैं, वहां इन समुदायों के लोगों के लिये कोई जगह ही नहीं है। अपने ही देश में इस तरह के भेदभाव मे यह समुदाय जी रहे है। लोगों को अपनी जाति पर ही गुस्सा आ रहा होता है। सभी उन्हें तिरस्कृत कर रहे होते हैं। कोई भी इंसानों की तरह बात नहीं करता। जिस तरह अपराधिक जाति के ठप्पे के साथ यह जी रहे हैं जिसके कारण अपनी पहचान छुपाना पड़ती है। जिस पहनावे, संस्कृति व पारम्परिक हुनर से उन्हें जाना जाता था और वे गर्व से जी सकते थे, वो आज के समाजिक और राजनैतिक माहौल ने उनसे छीन लिया है। जाति को इतना बदनाम कर दिया है कि जाति का नाम गाली की तरह उपयोग किया जाता है।

इन परिस्थितियों में विमुक्त जातियों के साथ जातिगत भेदभाव को पहचानते हुए सरकार को अत्याचार निरोधक (अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति) कानून के अन्तर्गत विमुक्त जातियों के साथ हो रहे जातिवाचक अत्याचार को जोड़ना चाहिए।

विमुक्त जातियों के काम–धंधे

जीवनयापन के साधन – पहले और आज

लोगों ने अपने काम धंधो को चित्रित किया और बताया कि कौन से काम पहले से चलते आये हैं और अभी जीवन यापन के लिए और क्या काम अपनाये गए हैं। कई कमाई के रास्ते इस समुदायों की पहचान से भी बहुत जुड़ गये हैं।

पुश्तैनी काम धंधे तो पूरे समुदाय की एक धड़कन नुमा हैं। अलग अलग चुनौतियों और रुकावटों के बावजूद लोगों के पुश्तैनी कामों से ही लोगों के लगाव दिख रहे हैं। परिस्थितयों और जीवन में बदलाव के चलते, कुछ काम–धंधे समुदाय के बड़े हिस्से ने अपनाये हैं और कुछ विकल्प गिने–चुने परिवारों और व्यक्तिगत लोगों ने।

पुश्तैनी काम	नए काम (5–30 साल से शुरू किये गए) समुदाय का बड़ा हिस्सा	कुछ परिवारों में अतिरिक्त कमाई के लिए शुरू किया
पक्षी और छोटे जानवर पकड़ना और बेचना डाक ले जाना खेतों की चौकीदारी करना जड़ी बूटी बेचना दारु बनाना और बेचना मनिहारी का काम – माला, अंगूठी, रुद्राक्ष सामग्री मेलों में और बाज़ार में बेचना कुंए और बावड़िया बनाना रस्सी पर चलना ढोल बजाना	कंपनी की दारू बेचना मज़दूरी पर जाना पत्थर तोड़ना कबाड़ बीनना शादी में बैंड बजाना शादी में वेटर का काम	मछली पकड़ना बकरी पालना

काम और पुलिस

पुश्तैनी काम का बाज़ार में मूल्य या तो कम होता गया है या ये व्यापार अपराधिक श्रेणी में लाए गए हैं। उदाहरण पारधियों, सपेरों के काम अब कानून के उल्लंघन के दायरे में आते हैं। एक अलग तरह से मनोरंजन के नए साधन फैलना।

इन परिस्थितियों में पुलिस का इन समाजों में आना–जाना चलता रहता है और इनकी मजबूरियों का पूरा फायदा पुलिस भी उठाती है (इसके ऊपर विस्तार में अलग अध्याय में चर्चा है)।
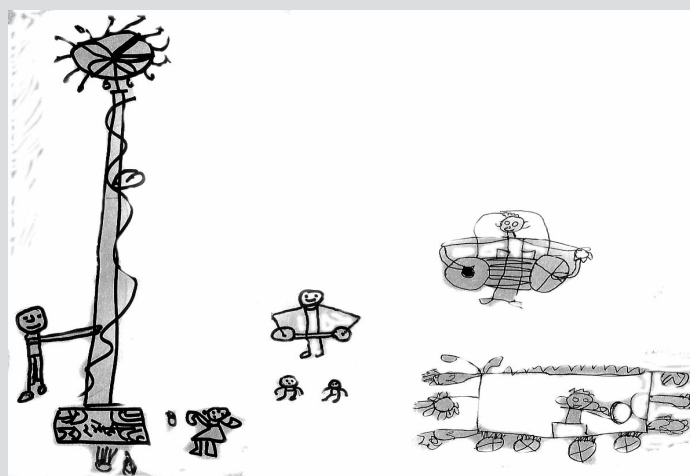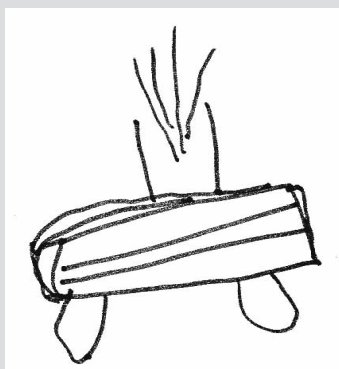
हमारे काम–धंधे छीन लिये और हमे चोर बोलते हैं।

गाँव के बुजुर्ग ने भी बताया कि बड़ी कंपनी, सोम डिस्टिलरी की ही दारु हम बेचते हैं।
कंपनी कमाती है और हम बदनाम होते आए हैं।

कच्चा मकान है; कोई योजना का लाभ नहीं; हमे धंधा दिया जाये तो हम दारु नहीं बेचे।
पुलिस के कारण हम और गरीब हो गए हैं।

पुलिस छापे मारती है और केस बाछरा समुदाय की महिलाओं पर बनते हैं न कि कस्टमर पर।

दोनों रास्तों में उनकी ज़िंदगी के अगले पड़ाव के लिए कोई नए रास्ते नहीं बनते यह स्थिति सभी पीढ़ियों में दिख रही। लेकिन चल रहे कामों के परे कोई भी ऐसे ठोस विकल्प नहीं हैं जिसके भरोसे लोग अपने रोज़मर्रे के जीवन को बदल पाए।

नए काम – कौनसे विकल्प वास्तविक में लोगों के लिए हैं

लोगों की बातों से यह झलक रहा था, बार बार और अलग अलग शब्दों में कि कुछ और अलग काम भी करना चाहते हो लेकिन कोई विकल्प ही नहीं है। लोग स्वीकार करते हैं कि वे शराब बेचते है, छोटी–मोटी चोरियां करते है लेकिन वे ये सब सिर्फ ज़िंदा रहने की न्यूनतम ज़रूरतों को पूरा करने के लिए करते हैं।

जो रास्ता लो, उसमें उनके समाज के प्रति पूर्वाग्रह और पूरा नकरात्मक माहौल किसी को भी हरा देता है। इन तमाम मुश्किल हालातों के बावजूद आजीविका हेतु लोगों ने नए विकल्पों को तलाशने और उन पर काम करने का प्रयास किया गया किन्तु अपराधी जाति का ठप्पा होने के वजह से उन्हें बहुत मुश्किलें आती हैं। उन्हें हमेशा शक की निगाह से ही देखा जाता है। अगर पारधी हो तो चोर हो, अगर कंजर हो तो अपराधी हो, इस तरह की मानसिकता समाज और सरकार दोनों की है। कुछ केस से समझ आया कि पुलिस भी उन्हें इस स्थिति से बाहर नहीं निकलने देना चाहती। बाकी मुख्यधारा समाज उनको कुछ अलग मौके ही नहीं दे रही।

सब (बाहरी संस्थाएं और सरकार) चाहते हैं कि लोग वैश्यावृति से निकल जाए,
लेकिन कोई वैकल्पिक काम नहीं देते हैं।

पुलिसवाले हमें कोई काम नहीं करने देते। मैंने भैंस खरीद के दूध का धंधा शुरू किया,
पुलिस वाले आए और मेरे घर का सारा घी फेंक दिया।

किराने की दुकान लगाई उसमे पेट्रोल–डीज़ल बेचते थे।
पुलिस ने एक क्विंटल शक्कर में डीज़ल मिला दिया।

अगर कोई नौकरी मिल जाती या दो बीघा सींचित ज़मीन होती, तो कौन कचरे में हाथ डालता।

लोग फिर भी नए और अलग कामों के प्रयास में हैं, खासतौर वो जो शहर में आ गए हैं। लेकिन कुछ भी स्थायी अभी जम नहीं रहा है। लोगों को लोन की आवश्यकता लगती है कि कुछ वैकल्पिक काम हो पाएं और नियमित तनख्वां, तो वो ऐसे कामों से हटना चाहेंगे जिनसे उन्हें बदनामी ही मिली है, लेकिन कम से कम पेट पलता है।

ये समुदाय खुद को एक मकड़ जाल के अंदर फंसा सा महसूस करते हैं जिससे निकल पाने की छटपटाहट उनमे साफ दिखाई देती है।

परिस्थितियों में बढ़ती आर्थिक मजबूरियां

हम लोगों के पास कोई ज़मीन नहीं है और ना ही हम लोग शिक्षित है, हम शराब बनाते है और उसे बेचते हैं। इससे बमुश्किल 100–150 रूपए कमा पाते है और इसी कमाई से दाल आटे का इन्तज़ाम हो पता है और हम अपने बच्चों को दो वक्त की रोटी खिला पाते हैं।

मेरे पर 34/2 का केस लगाया। मेरे बाल–बच्चे बहुत परेशान हुए – मांग कर खाते थे। मैं बहुत रोती थी।

गरीबी में डूबे लोगों के पुलिस को पैसे देते देते और कर्ज़े होते गए हैं। उन्हें अपने जानवर, बर्तन भांडे, बेचना पड़ता है, ज़मीन व घर के पट्टे को गिरवी रखना पड़ता है और तो और पलायन भी करना पड़ता है। तारीख पर ब्याज नहीं दे पाते तो ब्याज के ऊपर ब्याज लग जाते हैं। कभी कभी परिवारजन जेल में होते हैं तो पूरा परिवार उसको छुड़वाने में लगा होता है।

कहीं कहीं कर्ज़ के बदले उन्हें बड़े किसान या ज़मींदार के यहाँ बच्चों को हरवाई (बंधुआ मज़दूर) के रूप में रखकर पैसे उठाने पड़ते हैं और जब तक पैसा नहीं चुकता हो पाता तब तक बच्चों को इसी तरह बंधुआ बनकर काम करना पड़ता है। इससे बच्चों की पढ़ाई छूटती है और बच्चे बाल मज़दूरी व बंधुआ मज़दूरी की तरफ धकेल दिए जाते है। जिसके लिए पूरी तरह से पुलिस ज़िम्मेदार है। जहाँ किसी और के पास बंधुआ मज़दूरी में नहीं बंधे हों, वो अपनी माँओं के साथ कमाई करने के लिए मजबूर हो जाते हैं। घर में एक इन्सान की कमाई रोज़ के खर्चे में जाती है और दूसरे की कर्ज़ा चुकाने के लिए।

मेरे पति मर गए हैं और पांच बच्चों की शादियां कैसे करूंगी... सरकार थोड़ी बहुत ज़मीन दे दे या कोई नौकरी दे दे।

लोगों के जीवनयापन के लिए विमुक्त, घुम्मकड़ और अर्द्ध–घुम्मकड़ आयोग के कई सुझाव हैं। सिफारिशों का कुछ अंश यहाँ रख रहे हैं –

- उनकी क्षमतायें बढ़ पाये उसके लिये लोन दिया जाये।
- योजनाओं से जोड़ा जाये और विमुक्त जाति की ज़रूरतों को ध्यान में रखकर विशेष योजनायें बनाई जायें।
- सभी योजनाओं में उनके लिए एक आरक्षण रखा जाये ताकि उन तक पहुँचाया जाए।
- कौशल विकास प्रशिक्षण दिये जाये। इसमें स्कूल का सर्टिफकेट न मांग कर लिखना–पढ़ना पर्याप्त माना जाए अडमीशन के लिए।
- यह समुदाय मिट्टी बांस से विभिन्न सामाग्रियां बनाता है। उनकी इस योग्यता को कला की तरह देखा जाये वे अपना काम और बेहतर कर पाये इसके लिये उन्हें लोन दिया जाये।
- उन्हें लायसेंस उपलब्ध कराया जाये ताकि वे सम्मान के साथ अपना सामान बेच पाये।
- उनके सामान को रखने व बेचने के लिये शोरूम बनवाये जाये।
- स्वयं सहायता समूह बनवाये जाये इस माध्यम से उन्हे पैसे दिये जाये।
- चूंकि ये समुदाय वर्षो से अपने पुराने काम ही कर रहा है जैसे सांप पकड़ना तीतर पकड़ना आदि जिसके कारण लोग पुलिस, संस्था, सरकारी लोग उन्हें परेशान कर रहे हैं। ऐसे नियम कानून जिससे उनके परम्परागत काम करने पर उन्हे अपराधी बनाया/दिखाया जाता है, उन्हें बदला जाये। जंगलों में छोटे जानवर पकड़ने देना चाहिए।
- सरकार कानून बना कर न्यूनतम 1 एकड़ ज़मीन दे जिसमें पानी हो और शर्त हो कि वो किसी का नहीं देंगे।
- इस समुदाय के लिये भी 10 प्रतिशत रिजर्वेशन हो।

अनुसूचित जाति – अनुसूचित जनजाति की धुंधली श्रेणी

संविधान द्वारा 'सकारात्मक भेदभाव' के प्रावधान विमुक्त जातियों के लोगों के लिए बहुत ही ज़रूरी है। लेकिन प्रशासनिक गफलतों में ये सुविधाएं लोगों तक नहीं पहुँच पाई हैं। चर्चा में विभिन्न समुदायों की परिस्थिति सामने आई।

आरक्षण – एक वास्तविक विकल्प ?

अनुसूचित जाति या जनजाति के मार्फत आरक्षण का फायदा ले पाने का सवाल उन लोगों के लिए आता है जो 12वीं की पढ़ाई कर चुके हो, जो अपनेआप भी बहुत ही सीमित संख्या है। ऊँची शिक्षा की फीस नहीं दे पाना और नौकरी नहीं मिलने पर मायूस परिस्थिति सामने दिखती है।

हम लोग चौकीदारी करते थे, नवाब के जमाने में हमारे बाप–दादाओं को इज्ज़त से बुलाते थे और उनके हिस्से का अनाज देना, सब चलता था। लेकिन आज पूरे मध्य प्रदेश में एक भी पारधी सरकारी नौकरी में नहीं है – एक भी पारधी व्यक्ति चपरासी तक नहीं बन पाया है।

मैं मंजू ने 12 वी के बाद पैसों की वजह से और जाति प्रमाण पत्र नहीं होने की वजह से पढाई छोड़ दी। अगर जाति प्रमाण पत्र होता, तो शायद थोड़े पैसे जोड़कर कॉलेज चली जाती।

अनुसूचित जाति – अनुसूचित जनजाति की धुंधली श्रेणी

कार्यशाला में अलग बसाहटों में जाति प्रमाण पत्र की उपलब्धता को समझने की कोशिश की गई क्योंकि पहले सत्र से यह बात उठ रही थी।

कंजर – मध्य प्रदेश में अनुसूचित जाति की सूची में राज्य–भर में वर्गीकृत है।
बैरसिया (नरसिंहगढ़) से आये लोगों का अंदाज़ा था कि उनके गाँव में करीबन 10 फीसदी लोगों के जाति प्रमाण पत्र बन पाए हैं। यह वहां के सरपंच के प्रयासों का असर है।
भोपाल जिले के बैरसिया तहसील में रहवासी कंजर समुदाय के लोगों का कहना था कि उन्हें 'बिजोरी' समुदाय का बोला जा रहा है और सुविधाओं से वंचित रखा गया है। उनके यहां जाति प्रमाण पत्र नहीं बने हैं। वे वास्तव में कंजर समाज के ही हैं।

पारधी – मध्य प्रदेश की किन्हीं तहसीलों में अनुसूचित जाति तो कहीं अनुसूचित जनजाति और कई जिलों में जनरल में वर्गीकृत हैं।
हरदा और भोपाल से आये सहभागी इसी बात से त्रस्त थे कि उनके जिलों में उन्हें 'जनरल' में

रखा गया है जब कि जीवन की परिस्थितयां वैसी ही बदहाल हैं। यही विडम्बना इच्छावर (सिहोर जिला) के रहवासियों के लिए थी।

नट – मध्य प्रदेश में अनुसूचित जाति नुमा पहचानी जाती है। भोपाल में रह रही बड़ी आबादी में से केवल एक–दो लोगों के बने हैं। गाँव से जाकर बनवाने में कई दिक्कते होती हैं और खर्चीला विकल्प है, सो बहुत लोगों ने नहीं बनाया है।

बंजारा, कालबेलिया और सपेरा – मध्य प्रदेश में जनरल की श्रेणी में हैं जब कि कई राज्यों में एस.सी. या एस.टी. में पहचाने जाते हैं। अतः किसी के भी जाति प्रमाण पत्र बनने का सवाल ही नहीं उठता।

विमुक्त, घुम्मकड़ और अर्द्ध–घुम्मकड़ आयोग (2008) ने संविधान में विमुक्त जातियों को 'अनुसूचित समुदायों' की एक विशेष संरचना करने की बात रखी है ताकि विमुक्त जातियों के साथ ऐतिहासिक अन्याय को सकरात्मक भेद–भाव द्वारा निपटा जा सके। 'लोकुर कमिटी' ने भी यही सुझाव 1965 में दिये थे। आयोग का यह भी सिफारिश रही है कि क्षेत्र अनुसार इन जातियों को अनुसूचित जाति या जनजाति की श्रेणी में जल्द कर देना चाहिए और तहसील–वार और राज्य–वार भिन्नताओं का कोई तर्क नहीं है और यह खत्म करना आवश्यक है। इसके लिए अगले आयोग (जिसका समयकाल 2017 में खत्म हुआ) ने राज्यवार सूचियाँ भी बनाई हैं। इन समुदायों के जातिप्रमाण पत्र जल्दी बनाये जाये।

विमुक्त समुदायों में शिक्षा की स्थिति

ज़मीनी अनुभव और कई दस्तावेजों ने विमुक्त जातियों के बीच शिक्षा की असंतोषनीय स्थिति की वास्तविकता दिखाई है। अतैव कार्यशाला में इस मुद्दे पर एक सत्र केन्द्रित किया गया था ताकि सहभागियों से यह समझ पायें कि शिक्षा पाने में उन्हें क्या चुनौतियाँ आती हैं। हमारे लिए महत्व की बात यह भी थी कि हम यह समझ पायें कि असरदायक शिक्षा के लिए समुदाय के अनुसार क्या बातें ज़रूरी हैं।

7 से 8 युवाओं और बच्चों को समूहों में बांटकर बातचीत की गई ताकि सभी सहभागियों के अनुभवों को सामने आने का मौका मिल सके। वयस्कों के समूह में भी शिक्षा के ऊपर चर्चा हुई।

सहभागियों के समुदायों में शिक्षा की स्थिति

युवाओं ने अपनी बसाहटों और समुदायों में 'पढ़े–लिखे' लोगों की पहचान करने की कोशिश की ताकि आज की स्थिति उभर पाए। सभी बसाहटों में गिने–चुने लोग ही थे जो 6वीं के ऊपर 'पढ़ रहे हैं' या किसी समय पर यहाँ तक 'पढ़ चुके' हैं। नीचे दी गयी सारणी में यह झलकता है –

क्र.	बस्ती का नाम	पुरुष	महिलाएं
1.	गांधीनगर (नट समुदाय)	12वीं तक एक आदमी पढ़ा है और कुछ अभी लड़के छोटी कक्षाओं में हैं।	12वीं तक एक औरत पढ़ पाईं हैं और अभी लड़कियां पढ़ रहीं हैं।
2.	ईश्वर नगर (सपेरा समुदाय)	12वीं में एक 17 साल	9वीं कक्षा में एक लड़की पढ़ रही हैं।
3.	तरावली (कंजर समुदाय)	6वीं तक पढ़े हुए एक ही आदमी है बाकि अभी छोटी कक्षाओं में जा रहे।	कोई लड़की पढ़ी लिखी नहीं है।
4.	चौकी टपरा (पारधी समुदाय)	एक आदमी 10वीं तक पढ़े हैं।	नहीं पढ़ पाए हैं।
5.	सूरज नगर (बंजारा समुदाय)	एक पुरुष ने कॉलेज किया है। कुछ लड़के 10वीं में है अभी।	एक लड़की कॉलेज में पढ़ रही, दो लड़कियां 12वी में हैं।
6.	बंजारी बस्ती (न्यू अंबेडकर नगर) (पारधी समुदाय)	5 वी तक एक लड़का पढ़ा है।	कोई लड़की पढ़ी लिखी नहीं।
7.	हरदा (पारधी समुदाय)	कुछ लड़के पढ़ रहे हैं।	कुछ लड़कियां 9वीं– 10वीं तक पहुंच रही हैं।
8.	राजीव नगर (पारधी समुदाय)	एक लड़के ने 12वीं अभी किया है (स्कूल से बाहर पढ़कर)	एक लड़की ने 8वीं पास किया हैं, बाकि 4थीं से ऊपर नहीं पढ़ पाई हैं।
9.	राजीव नगर (सपेरा समुदाय)	एक लड़का 6वीं तक पढ़ा है।	नहीं पढ़ पाए हैं।
10.	एहसान नगर (पारधी समुदाय)	दो लड़के कॉलेज में हैं।	नहीं पढ़ पाए हैं।

लड़कियों की शिक्षा

समुदाय स्तर पर समझें, तो बंजारा और नट समुदाय में लड़कियों की पढ़ाई के प्रति एक सचेतता भोपाल की सूरज नगर और गाँधी नगर समुदाय में उभरी; बाकि समुदायों में लड़कियों का स्कूल जाना न के बराबर है। शहर के बनिस्बत, गाँव में रह रही आबादी तो भी लड़कियों को लोकल स्कूल में जोड़ती हैं लेकिन इसका असर लम्बे स्तर तक नहीं दिखता। कार्याशाला के सहभागियों ने बताया कि घर की ज़िम्मेदारियों में ज़्यादातर फंसी रहती हैं लड़कियां।

छोटे भाई–बहन को संभालती थी जब मम्मी बीनने जाती थी, सो नहीं पढ़ पाई। (पारधी लड़की)

भाई ने ज़िद किया कि पढ़ने दो उसको, तो घरवाले माने। (बंजारी लड़की)

गाँव के स्कूल में भेजते हैं लेकिन उसके आगे कुछ नहीं होता (बच्चों का)। कुछ दिन जाते हैं शहर के स्कूल तक, फिर छोड़ देते है। तो लड़कियों को तो भेजना ही नहीं हुआ। (कंजर महिला)

सामुहिक असर नहीं है

यह भी दिख रहा है कि कुछ बच्चों का पढ़ पाना एक समुदाय में बदलाव आने को नहीं झलकाता, वरन् खास व्यक्तियों की अपनी ज़िद और सपने और उपयुक्त मौके मिल पाने का नतीजा है। परिस्थितियों में बदलाव नहीं आया है। उसके विपरीत यह सामने आया है कि जब बच्चे स्कूलों से निकले हैं, तो उसमें कभी–कभी पूरा समूह इकट्ठे बाहर हो जाता है। पारधी समाज के बच्चों ने एक समय की बात बताई कि शिक्षक से परेशान होकर तीन लड़कियां और आठ लड़कों ने एक ही समय पर स्कूल जाना बंद कर दिया। साथ ही इन समुदायों में ऊँची कक्षा तक एक–दो बच्चे, युवा पहुँचने से अभी भी पूरे समुदाय में इनसे बिलकुल लगी–हुई पीढ़ी पर पढ़ाई का असर नहीं हुआ है। शायद ये युवा समुदाय के रोल–मॉडल नुमा तब उभर पाएँगे अगर उनकी पढ़ाई का वास्तविक जीवन में ठोस लाभ आ पाए।

बच्चे को पढ़ने के लिए क्या चाहिए

सहभागियों को कुछ फोटो दिये गए जिसमें उनके जैसे समुदायों की पृष्ठभूमि के बच्चे थे। इन बच्चों की छवियों से यह अंदाज़ा लगाना था कि इन बच्चों को पढ़ने में क्या मुश्किलें आती होंगी और क्या होने से उनकी पढ़ाई अच्छे से चल पायेगी। यह गतिविधी से कोशिश थी कि बच्चे झिझकें नहीं और अपनी बातों को भी इन बच्चों के माध्यम से सामने रख पायें।

बच्चों और युवाओं की बातों से स्पष्ट था कि वे इन फोटोवाले बच्चों से जल्दी अपनेआप को जोड़ पाए थे। जीवन में उनके परिवार स्तर पर और स्कूल के संस्थान से बहुत सीमित और साधारण अपेक्षाएं थी जिससे कि उनको स्कूलों में जमने और सीख पाने के लिए रास्ते संभव और खुलते हुए दिखते।

टीचर नहीं मारे, और प्यार से सिखाये तो हम सब लोग पढ़ लेते।
घर में कोई कमानेवाले हों तो अच्छा होता बच्चों के लिए।
स्कूल में अच्छे व्यवहार की ज़रूरत है, और इनके साथ भेद–भाव नहीं हो।

व्यक्तिगत अनुभवों पर जाते जाते बच्चों ने और कई बातें साझी करीं।

स्कूल में टीचर चुप बैठी रहती है। लाईट या हैं. डपंप नहीं है और खाना नहीं मिलता। मार–पिटाई भी करते हैं।
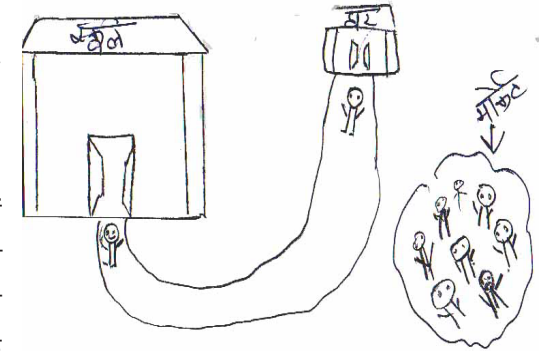
मुश्किलें एक प्रकार की नहीं हैं, और ऐसी स्थिति में हस्तक्षेपों की प्राथिमिकता को तय करना कठिन होता है। समुदाय की ज़रूरतों और क्या हम कर सकते हैं, न कि दूसरों को पहले क्या करना होगा, के आधार पर ही निर्णय और प्रयास संभवतः इस वीरान स्थिति में कुछ सकरात्मक ला पाएंगे। सर्वप्रथम इन वास्तविकताओं को हम वयस्कों को अच्छे से सुनना और स्वीकारना होगा।

व्यवस्थागत चुनौतियाँ

स्कूल पहुंचना एक चुनौती इसलिए हो जाता था क्योंकि 'किसान के घर' पार करने पड़ते थे। (पारधी शब्दावली में किसान सवर्ण समाज के ही होते हैं क्योंकि ऐतिहासिक तौर से पारधी के पास ज़मीन नहीं रही)। हमारे गाँव के 15 पारधी और सपेरे बच्चे लम्बे रास्ते से स्कूल जाते थे और दो नदी पार करनी पड़ती थी।

घर के पास स्कूल हो और स्कूल जाने के लिए रास्ता ही नहीं तो बारिश में बहुत मुश्किल होगी।

हालांकि गाँव, शहर और बस्ती–बस्ती में फर्क है, सहभागियों से मालूम हुआ कि सभी स्कूलों में पानी और शौचालय जैसी आधारभूत सुविधाएं भी उपलब्ध नहीं हैं। उदा. के लिए– ग्राम बिजौरी टपरा का प्राथमिक स्कूल बसाहट से 1.5 से 2 कि.मी. दूर है। स्कूल भी समय अनुसार नहीं खुलता। हाई स्कूल की दूरी 6 कि.मी. है जो कि मानक से 3 कि.मी. अधिक है। कई बच्चे तो इन वजहों से स्कूल ही नहीं जाते। ग्राम बिजौरी टपरा के प्राथमिक स्कूल में न तो शौचालय है न पीने का पानी। बच्चे या तो खुले में जाते हैं या वापस घर। यह स्थिति उस गांव की है जो कि भोपाल से लगा हुआ है तो जो दूरस्थ क्षेत्र में हैं उनकी क्या स्थिति होगी उसका अंदाजा लगाया जा सकता है।

हरदा के गांव में बच्चे 4 किलोमीटर दूर पैदल स्कूल जाते हैं। जब बस्ती और स्कूलों की दूरी ज़्यादा है, तो कहीं कहीं पर दूर से आने–जाने के चलते बच्चों को काफी थकान होती है और कुछ स्कूल छोड़ देते हैं। जहाँ रोड का रास्ता है, किन्ही जगहों में बच्चों को बस ड्राईवर फ्री में बैठा लेते हैं लेकिन कहीं कहीं पर खर्चा काफी होता है। कार्यशाला में आए युवाओं की मांग थी कि यदि स्कूल दूर हों, तो बस की सुविधा देनी चाहिए।

बच्चों की भाषा के लिए कोई जगह नहीं है, वरन् अपमान का कारण बन जाता है

हम घर में दूसरी भाषा बोलते हैं तो हिन्दी भी ठीक से समझ नहीं आती थी। संस्कृत व अंग्रेज़ी का तो कुछ समझ ही नहीं आता। समझने के लिए जब मैं कभी अपने दोस्त से अपनी भाषा में बात करता तो मेडम और दूसरे बच्चों को लगता कि हम गाली दे रहें हैं।

स्कूल में हम कभी भी सबके सामने अपनी भाषा में बात नहीं करते थे। मेडम कहती यह अण्ड सण्ड बातें यहां मत किया करें। शर्म भी आती थी और डर भी लगता था कि कोई गलत मतलब न निकाल लें। मुझे यह लगता कि मैं इस जाति में पैदा ही क्यों हुआ।

कंजर–पारधी में बात करने की इज़ाजत नहीं थी, बोलते थे कि तुम अपने भाषा में बात नहीं कर सकते। बोलते थे तुम्हारे साथ दूसरे बच्चे भी तुम्हारी भाषा सीखेंगे। अपनी भाषा में बात करो तो बोलती हैं कि गाली दे रहे हो।

कई बच्चों की कहानियां यह बताती हैं कि हमारी शिक्षा व्यवस्था में इन बच्चों के लिए जगह ही नहीं हैं। अगर होती तो इनकी भाषा और संस्कृति को पाठ्यक्रम में स्थान तो ज़रुर दिया जाता। न कि इनको अपनी भाषा बोलने से रोका जाता। भारत विभिन्न संस्कृतियों और भाषाओं वाला देश है। संविधान में हर भाषा में शिक्षा उपलब्ध होने का प्रावधान है। एक तरफ यह सम्मान तो नहीं दिया जाता, लेकिन साथ ही हमारे स्कूलों में यह स्थिति है जो बच्चों को उनकी भाषा पर शर्म महसूस करवा रही है।

स्कूल में गुणवत्तापूर्ण पढ़ाई न होना

हिंदी जैसा सरल विषय समझने में नहीं आता था।

टीचर बोर्ड पर लिखकर चली जाती है और बोलती है कि लिखो।

मुझे चिढ़ाते थे कि पढ़ती नहीं है।

5 साल स्कूल जाने पर भी पढ़ना न सीख पाया तो सोचा मां का हाथ ही बंटा दूं।

चौथी कक्षा तक स्कूल गया लेकिन पढ़ना नहीं सीख पाया क्योंकि मेरे स्कूल में मेडम कुछ पढ़ाती ही नहीं थी, इस साल मैंने स्कूल जाना ही छोड़ दिया।
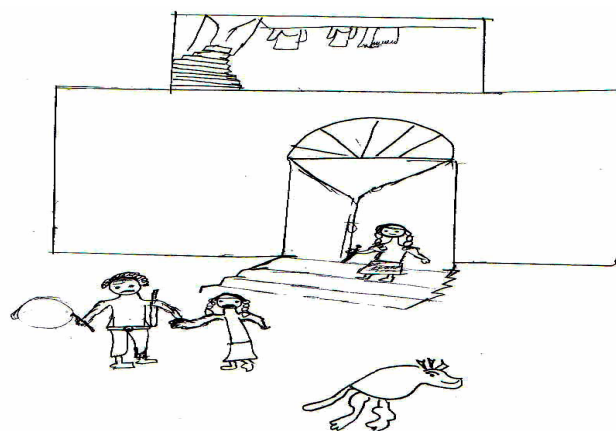
बच्चे महीने दर महीने, साल दर साल सीखते हैं तो उनको भी सकारात्मक एहसास होता है, नहीं तो उनको मायूसी महसूस होती है और वो स्कूल में नाकाम महसूस करने लगते हैं। वो इस चीज़ को भली–भांति समझ लेते हैं कि यह जगह उनके काम की नहीं। सैकड़ों बच्चों ने स्कूल इसलिए छोड़ा है कि वहां जाने का कुछ अर्थ ही नहीं उन्हें महसूस होता था। रोज़ जाओ, घंटो बिताओ और कोई सीखने में बढ़त ही नहीं।

इन परिस्थितियों के बावजूद जो बच्चे स्कूल में टिके रहते हैं, नौंवी में जब पहुँचते हैं तब उनको पढाई में मुश्किल होती है क्योंकि पीछे की कक्षाओं में ठोसपन से पढ़ाया नहीं गया होता और अब बोर्ड परीक्षाओं का सामना करना पड़ता है।

औपचारिक शिक्षा को अनुकूल होने के लिए समाज की कमज़ोर स्थिति

समुदायों का इतिहास ऐसा रहा है कि बच्चों को कमाई की भूमिका में अपनेआप को देखना कोई अनजान बात नहीं लगती। छोटी उम्र से ही उनको एक ज़िम्मेदारी का एहसास होने लगता है और सभी कामों में हाथ बटाना एक स्वाभाविक प्रक्रिया नुमा जीवन में उतर जाता है। अतः घर में परिवारजन की तबीयत खराब होना, माँ या पिता के देहांत होना, एकदम से बच्चों को शिक्षा से बाहर कर ही देता है। ज़िंदगी के और भी संकट विमुक्त जातियां और गरीब समुदायों पर और अधिक आते हैं, वो भी बच्चों की शिक्षा की यात्रा को असर करते हैं। बच्चों और वयस्कों का पुलिस में बंद होना, बस्ती से विस्थापन – ये सभी बातों के कारण लोगों ने उनके खुद का और उनके समुदायों के बच्चों का स्कूल न जाने और छोड़ने का कारण बताया।

स्कूलों में शारीरिक हिंसा

मैं जब स्कूल जाता था, तो सर बहुत मारते थें, छड़ी से नहीं, मुक्के बना–बन कर पीठ पर मारते थे। देखते नहीं थे कि बच्चा छोटा है कि बड़ा, भड़ा–भड़ मारते थे।

पूरा काम कर लो तो भी टीचर मारती है। डंडे से हाथ–पैर में और सभी जगह मारती है और मुर्गा भी बनाती है। खजूर की डंडी से मारते हैं। हमारे बच्चों से झाडू लगवाते और हमारे बच्चों के लिए और खराब गालियां होती हैं। एक बार, बाल पकड़कर मारी थी। हम यह कहने गए कि हमारा होमवर्क हो गया है तो हमारा सुना ही नहीं और (पता नहीं क्यों) उतने में ही मारने लगे। इस सब में बच्चे स्कूल से बाहर आकर दारु बनाने में लगे रहते हैं। उन पर भी ज़िम्मेदारी हो जाती है।

मेरा भांजा स्कूल जाने के नाम से घबराता है। उसे स्कूल के पहले दिन ही टीचर ने ऐसा मारा कि वो बीमार हो गया और कभी वापस स्कूल नहीं गया।

मुख्यधारा समाज में यह बात हमेशा उठती है कि पहले स्कूलों में बहुत सज़ा दी जाती थी और अब तो मारना बंद हो गया है, शायद किसी ज़माने से स्कूल में हो रही हिंसा कम हुई होगी, लेकिन आज भी कायम है और आज के बच्चे के लिए उतनी ही दुखदायक है जितनी किसी और बच्चे के लिए रही होगी।

स्कूलों में मानसिक अत्याचार और भेद–भाव

बच्चों और युवाओं के मन में ऐसी बहुत घटनाएँ थी जब उनके साथ भेद–भाव और हिंसा हुई है। शारीरिक हिंसा में उनकी जाति–विशेष अवहेलना बहुत जुड़ा हुआ है। लोगों को जो बातें परेशान करी हैं, वो उतनी ही शारीरिक हिंसा से जुड़ी हैं जितनी मानसिक प्रताड़ना से।

फुंसी हो जाये तो बोलती हैं कि तुम लोग गंदे हो।

गाली–गलोच तो इनकी माओं के मुंह में रहती है।

पारधी पारधी.. मांस खाकर आता है .. पानी के ग्लास छूने नहीं देते थे।

सहभागियों ने उपरोक्त तरह के कई उदाहरणों से बताया कि शिक्षकों द्वारा जातिसूचक शब्दों का उपयोग और जाति को अपमानित करते हुए बात होती है। स्कूल में अलग अलग प्रकार के काम करवाएं– बेंच लाना, सफाई करना, कंडे लाना। यह अपनेआप में इतनी बड़ी बात नहीं होती लेकिन बच्चों ने बताया कि उन्हें इसमें उनके जाति–विशेष भेदभाव महसूस होता है क्योंकि यही काम दूसरों से नहीं करवाया जाता था। किसी बच्चे ने कहा कि जब लड़ाई होती है, तो दोनों बच्चों को डांटना चाहिए लेकिन हम लोग को ही डांटते हैं।

जाति–विशेष भेदभाव बच्चों को पढ़ाई में आगे जाने में भी अपना छाप छोड़ता है। बच्चों ने निम्नलिखित अनुभव साझे करे।

जब कुछ गलती हो जाती थी, तो टीचर कॉपी फाड़ देती थीं।

तुम लोग तो पढ़ना नहीं चाहते तो आगे क्यों बैठ रहे।

पांचवी कक्षा में एक प्राइवेट स्कूल में पढ़ने जाता था। हम सभी पारधी बच्चों को गन्दा बोलती थी कहती थी कि नहाकर नहीं आये हो, तैयार होकर नहीं आये हो। तुम पारधी हो, पारधी के बच्चों को कुछ नहीं आता। महीने खत्म होने के पहले ही फीस का टोकती थी।
थोड़ा भी गलत हो जाता था तो बहुत जोर से लकड़ी की छड़ी से मारती थी। पारधी बच्चों को ज्यादा मारती थी। मेरे छोटे भाई के बसते में किसी बच्चे ने कम्पास डाल दिया। तो टीचर बोली तुम पारधी चोर–उच्चके हो। पारधियों को तो पढ़ाना नहीं चाहिए।

तस्वीर 19 वर्षीय लड़का

क्यों पैसे लेने आये हो न, वैसे तो आते नहीं।

ये लोग तो स्कूल लड़ने के लिए आ जाते हैं।

चाहे वो कंजर हो, बंजारा हो, पारधी हो, किसी भी समाज का हो, उसका क्या कसूर है, उसकी क्या गलती है कि वो किसी एक जात का है।

आरती, 16 वर्षीय लड़की

बच्चों के भेदभाव के अलग–अलग प्रकार के अनुभव हैं, और हम वयस्कों को पहचानना चाहिए कि बच्चे इस तरह के रवैये को भली–भांति पहचान पाते हैं। पीछे बैठने, अलग लाइन में खड़े होना या लाइन में सबसे पीछे जाकर खड़े होना जब कि बाकि सब बच्चे मिले जुले खड़े होते हैं जैसी वारदातें इनके लिए आम हैं। ऐसे अनुभवों को लगातार झेलने के कारण बच्चों ने कभी मज़ाक में तो कभी परेशान होकर बातें रखीं।

मैडम के व्यव्हार से लगता था कि स्कूल छोड़कर दूसरे स्कूल चले जाऊं।

चर्चा से समझ आया कि हम मध्यमवर्गीय समाज के लोग शारीरिक हिंसा को ज़्यादा महत्व देते हैं और सभी वयस्क भी कहीं अपमान को चुप–चाप स्वीकारने के लिए मजबूर हो जाते हैं लेकिन बच चों और युवाओं के लिए यह चोट ऐसे चुभती है कि कुछ स्वाभिमानी बच्चे इस तिरस्कार को झेल नहीं पाते हैं।

नई दिल्ली (बैरसिया, रायगढ़) के बसाहट में प्राथमिक शाला का शिक्षक कंजर समुदाय का ही है और गए 20 साल से इस कारण बच्चों का स्कूल में ऐसे नकारात्मक अनुभव नहीं हैं, और बच्चे स्कूल से इस तरह से भागते नहीं है।

इन समुदायों के बच्चों के प्रति भेदभाव का एक नक. ारात्मक भाव केवल प्रशासनिक और मुख्यधारा समाज के वरिष्ठ लोगों के बीच नहीं, समाज के सभी लोगों के बीच से निकलता हुआ प्रतीत होता है। विमुक्त जातियों के विरुद्ध इन पूर्वाग्रहों की जड़ की गहराई तब स्पष्ट दिखती है जब बच्चों, जो कि सबसे मासूम उम्र–समूह होता है, के विरुद्ध व्यवहार हो रहा है, और सवर्ण जात और उच्च जात के लोगों की तरफ के साथ साथ मिलते–जुलते आर्थिक पृष्ठभूमि के लोगों के व्यवहार में भी उतर गया होता है।

दूसरे समुदाय के बच्चों का इन समुदाय के बच्चों से दोस्ती न करना व छुआ छूत करने के अनुभव कार्यशाला में बच्चों के चित्रों में आए। स्कूलों में चल रहा यह जातिभेद हमारी शिक्षा पद्धति पर सवाल खड़े करता है की यह किस तरह कि शिक्षा हम बच्चों को दे रहें जो इंसान–इंसान में भेद को प्रोत्साहित कर रही है।

स्कूल में 'बच्चे' होने के लिए या उनके वास्तविकता के लिए कोई जगह नहीं।

मैं सो जाती थी।

गाँव जाने पर नाम काट देते थे।

मैं स्कूल लेट पहुंचता था.. कभी पतंग में, तो कभी खेल में भूल जाता था। डांट पिटती थी और एक बार एक लड़की से बात कर रहा था तो किसी ने लड़कियों को छेड़ने का झूठा नाम लगा दिया और मुझे बहुत पिटवाया।

उपरोक्त व्यवहार स्कूल के नियमों की दुनिया में स्वीकार्य नहीं हैं और हम सभी वयस्क इसका दोष बच्चों और बच्चों के पालकों को ही देंगे। लेकिन फिर भी सोचने की बात है कि इस प्रकार के सब व्यवहारों में इतना क्या गलत है। स्कूलों ने बच्चों की स्वतंत्रता और व्यक्तिगत स्वभाव के लिए कोई जगह नहीं छोड़ी है। जब इस तरह के रोक–टोक होती है, तो कई बच्चे स्कूलों में अपने आप को असहज महसूस करते हैं। कई बार यही बाते बच्चों को बहुत तोड़ देती है क्योंकि वो उनके स्वभाव का हिस्सा हैं और उनसे दूर होना बहुत मुश्किल होता है। जब उनके परिवारों और समुदायों में स्कूल से बाहर होना कोई इतनी अनसुनी बात नहीं होती, तो स्कूल में 'स्वीकार्यता' या यूं कहिये, 'उनको सहा जाना' इतना महत्व का नहीं रहता और अपने जैसों के बीच रहना ज्यादा सही विकल्प महसूस होता है।

होस्टल का विकल्प भी उचित है कि नहीं

घर की परिस्थितियों के चलते होस्टल एक बहुत ठोस विकल्प होना चाहिए था, लेकिन उपस्थित सहभागियों के होस्टल के अनुभव से समझ आया कि बहुत बच्चों और पालकों को यहाँ अलग अलग प्रकार की मुश्किलों का सामना करना पड़ा है। राजगढ़ के बेरासिया गाँव के नई दिल्ली मोहल्ला से आये कंजर समुदाय के लोगों ने बताया कि बच्चों को होस्टलों में भर्ती किया था लेकिन बच्चे वहां खुश नहीं थे। भोपाल के नट समुदाय के परिवारों से समझ आया कि उनके अनुभव भी थोड़े मिलजुले ही रहे हैं। जहाँ एक खास होस्टल में बच्चे पढ़ पा रहे हैं, वहीं दूसरी जगह का आवासीय अनुभव नकारात्मक रहा है। होस्टल में नियमित पढ़ाई के लिए बच्चों को साबुन, तेल, कम्बल और अन्य सामग्री नियमित पहुंचानी होती है।

मेरे मामा की लड़की की मृत्यु हो गयी थी। जब मैं दो दिन बाद स्कूल गया तो वहाँ सर ने बहुत मारा कि तू दो दिन कहाँ था। मैंने बोला भी कि अपनी बहन की डेथ के कारण नहीं आ पाया तो भी सर ने बांस की लकड़ी से बहुत मारा। फिर मैंने स्कूल छोड़ दिया, अगर सर मुझसे प्यार से व्यव्हार करते तो मैं स्कूल नहीं छोड़ता।
16 वर्षीय सपेरा लड़का

मैं अभी दसवी में हूँ। मैं सोचता हूँ कि मैं अच्छी पढ़ाई कर पाऊं लेकिन अभी दो महीने बीमार पड़ गया तो पढ़ाई छूट गयी और बहुत महंगी ट्यूशन लेनी पड़ रही है। मुझे स्कोलरशिप भी नहीं मिलती है। बहुत बार मज़दूरी कार्ड स्कूल में दिया लेकिन कुछ मदद नहीं मिलती है, अगर पढाई हो पाए, तो मेरी प्रधानमंत्री से रिक्वेस्ट है कि मुझे नौकरी मिल जाएं।
17 वर्षीय सपेरा लड़का

बैरसिया (भोपाल) के बिजोरी टपरा के बच्चों ने होस्टल कुछ ही हफ्तों में छोड़ दिया था। पारधी बच्चे एक समूह–नुमा शासकीय होस्टलों के हिस्सा नहीं बन पाए हैं और एक–दो लड़कियां अलग अलग कभी होस्टल में कुछ साल पढ़ीं। बड़ी तादात में वे गैर–शासकीय आवासीय होस्टलों में पढ़े हैं, लेकिन यह सीमित समय के शिविर नुमा चले हैं। इस समाज से होस्टल की मांग बहुत स्पष्ट थी। खाने की मुश्किलें और शाररिक हिंसा के साथ साथ होस्टलों के अनुभवों में यौनिक हिंसा की वारदातें एक अलग असर और रूप ले लेती हैं। कार्यशाला में ऐसे दो बड़े अनुभव सामने आये।

यौनिक हिंसा का माहौल

स्कूल में उपस्थित शिक्षक और होस्टल के वार्डन द्वारा बच्चों की उम्र और सामाजिक परिस्थितियों का फायदा उठाते जाने के अनुभव सामने आए। इस माहौल में एक व्यवस्था में उपस्थित और पुरुष भी इसमें अपनी बुरी मानसिकता को पनपने देते हैं। छोटे लड़के हो या नाबालिग लड़कियां, इसका शिकार बनी हैं। कभी इन हादसों की शिकायत हुई है तो कई बार नहीं भी हुई है और बच्चे या पालकों ने बच्चों को स्कूल से बस निकाल दिया।

यह शिकायत होस्टल में पढ़ रहे बच्चों के साथ साथ घर से आने जाना करने वाले बच्चों से भी सामने आई। रास्ते की छेड़–छाड़ और स्कूल में सर और लड़कों द्वारा भी लड़कियों के प्रति दुर्व्यवहार की वारदातें सहभागियों द्वारा साझी की गईं।

बहन के साथ दूसरे जाति के लोग छेड़–छाड़ करते थे।

स्कूल जाते समय ऑटो–वाले ने छेड़–छाड़ की।

छटवीं क्लास में हम होस्टल में पढ़ते थे। रविवार के दिन बाहर सामान लेने जाते थे तो एक बार, गेट खुला रह गया। एक पुलिसवाला अन्दर आ गया और पेशाब करने लगा। हम लोग वहां से चुप–चाप निकल गए। तो बाहर निकलकर वो बोला कि तुमने क्या देखा जब हमने बोला कुछ नहीं, तो बोला जब प्रैक्टिकल सीखना होगा, तब मेरे पास आना। हम दोस्त वहां से डरकर भाग गए। उसके बाद मैंने स्कूल छोड़ दिया। मम्मी बोलती रही कि स्कूल वापस जाओ तो भी मैं नहीं गयी।

हम बच्चों को सर बीच रात में उठाकर ठंडा पानी डालता था और फिर नंगा कर विडियो खींचता। एक बच्चे को पूछता था कि तुम्हे कौनसा जानवर अच्छा लगता है और वोह बोलता मुर्गा, तो उसे नंगा करके मुर्गा बनाता और दूसरों से उसको पत्थर मारने को बोलता था। बकरी दूध कैसी चूसती है, वो कर। और ऐसी और गन्दी चीज़ें करवाता। हमारा एक दोस्त भाग गया तो हमारी मम्मी लोग स्कूल आ गईं। सर बोले तुम्हे जहाँ शिकायत करनी है, कर लो।

विमुक्त जातियों की औपचारिक शिक्षा से जुड़ती हुई पहली पीढ़ी के लिए आवासीय व्यवस्था शिक्षा पाने का एक बहुत अहम कड़ी–नुमा पहचाना जाता है। शासन, संगठनों और परिवारों की भी यह मांग रही है। हालांकि शिक्षा व्यवस्था और समुदाय के लिए यह शायद ज़्यादा सुविधाजनक विकल्प होगा और स्कूली शिक्षा पाने के लिए असरदायक भी साबित हो सकता है, एक मानना यह भी है कि आवासीय व्यवस्थाएं सबसे उपयुक्त विकल्प नहीं हैं। यह रास्ता बच्चों को उनके समाज और संस्कृति से दूर ले जाता है, खास तौर अगर लम्बे अन्तराल में बच्चे अपने घरवालों से संपर्क में आते हैं और स्कूली शिक्षा व्यवस्था में उनके समाज की अवहेलना की ही झलक आती हो।
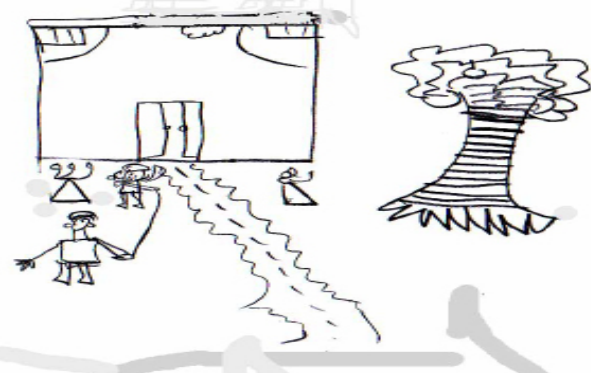
कुछ भी हो जाये...हम तो पढ़ेंगे ही

ऐसे कुछ बच्चे हैं जिन्होंने लम्बे तौर तक औपचारिक शिक्षा की यात्रा पूरी करी है, लेकिन यहां कार्यशाला में उन्होनें इसको खुशी और गर्व से ज़्यादा दर्द के साथ याद किया। एक व्यक्ति के तौर पर इन युवाओं ने काफी दुःख झेला है।

स्कूल में बच्चे पारधी, पन्नी बीनने वाले बोलते थे। पर मैं उन बातों पर ध्यान नहीं देता था।
पांचवी तक हम कई दोस्त स्कूल में इकट्ठे होते थे लेकिन मेरे (कालबेलिया) समाज वाले स्कूल से निकलते गए और 6वीं से 12वीं तक कोई मुझसे बात नहीं करता था। इतने साल मेरा कोई दोस्त नहीं था। पढ़ाई भी पांचवी तक ठीक थी, लेकिन इसके बाद, नकल ही करवाते थे। मैं सोचता था पढ़ूं, कैसे भी पढ़ूं। पढ़ता भी गया लेकिन टीचर भी उन्हीं को पढ़ाती थी जिनसे जल्दी बनता था। सब कुछ सहते रहें, फिर भी पढ़ेंगे।

कुछ युवाओं ने बताया कि इस पढ़ाई के पीछे बहुत लोगों ने विभिन्न तरीकों से उनका साथ दिया, तो यह हो पाया। माँ–बाप ने कठिन आर्थिक परिस्थितियों को पार करने के लिए प्रयास किये हैं कि बच्चे पढ़ते रहे, पैसा ट्यूशन में जाना पड़े या स्कूल फीस में, या स्कूल से जुड़ी और ज़रूरतें पूरी करने के लिए। किसी ने डबल शिफ्ट काम किया तो किसी ने उधार लेकर पढ़ाया। ऊँची क्लास तक पहुँचने वाले गिने–चुने बच्चों का सुझाव था कि सरकार को 11वीं–12वीं में इतनी फीस नहीं लेनी चाहिए।

मेरी माँ ने काम करके फीस भरी।

माँ ने विश्वास किया और दूर तक पढ़ने के लिए भेजा।

प्रिंसिपल बहुत अच्छे थे.. वो हम पारधी लोगों से पैसे नहीं मांगते थे और सभी जाति के लोगों के साथ इकट्ठे बैठते थे। मैं स्कूल आ पाऊं इसके लिए उन्होंनें साइकिल भी दी।

पारधी समुदाय के वयस्कों से यह भी मालूम हुआ कि आष्टा के गाँव में उनकी जात पंचायत ने नियम बनाया है कि पारधी समुदाय के हर परिवार का एक इन्सान गाँव में ही रहे और अगर वो बच्चा हो, तो उसे गाँव के स्कूल में भेजना ही होगा, नहीं तो जाति पंचायत में दंड लगाया जाएगा। ऐसे प्रयास समुदाय स्तर पर शुरू होना एक बहुत सकरात्मक कदम है।

निष्कर्ष – इस कार्यशाला के दौरान सहभागियों ने जो स्थितियां सामने रखीं उससे यह समझ आता है कि हमारी शिक्षा व्यवस्था इन समुदायों के अनुकूल नहीं है और यही स्थिति बनी रही तो आने वाले सालों में यह समुदाय पिछड़े ही रहेगें, इनकी शिक्षा की स्थिति में कोई बदलाव नहीं आ पाएगा। इस पर सिरे से काम करने की आवश्यक्ता है। स्कूल जैसी जगह पर जहां शिक्षक दूसरी जाति के बच्चों को प्रोत्सहित करती है वही पारधी समुदाय के बच्चों की कभी पीठ नही थपथपाते थे कोई प्रोत्साहन ही नही मिलता था। ढांचागत सुविधाओं और शिक्षकों के रवैये के साथ साथ हमारे पाठ्यक्रम में भी बदलाव की ज़रुरत है।

पुलिस व्यवस्था और विमुक्त जातियों के अनुभव

इस कार्यशाला में पुलिस के साथ विमुक्त जनजातियों के अनुभवों को भी समझने का प्रयास किया गया जिसमें सभी समुदायों ने बेझिझक अपने अनुभवों को बताया। लोगों ने अपने अनुभवों को अलग–अलग समूहों में बैठकर और लिखकर, बोलकर व ड्राइंग करके बताया। लोग अपने अनुभवों को बिना संकोच के बता पाएं इसलिए शुरुआत बच्चों द्वारा अभिनीत फिल्म से की गई जिसमें बच्चों ने अपने खुद के, अपने परिवार व समुदाय के अनुभवों को दिखाया है।

लोगों के पुलिस के साथ के बिताए हुए अनुभव बहुत ही गंभीर और उनके संवैधानिक अधिकारों का हनन करनेवाले हैं। एक तरफ लोगों के साथ मारपीट, महिलाओं के साथ छेड़छाड़, पैसे की वसूली, बिना वजह कई दिनों तक थाने में रखना और पैसे लेकर छोड़ देना, पैसे ना देने पर जेल में डाल देना इत्यादि की वारदातें आम हैं, तो दूसरी तरफ लोग अपनी मुश्किलों का हल इस व्यवस्था से नहीं उम्मीद कर पाते।

अलग अलग समुदायों द्वारा बताई गई अपनी परेशानियां

कुछ विमुक्त जातियों दूसरी जातियों के मुकाबले ज़्यादा प्रतारित हैं। कार्यशाला में उपस्थित कंजर और पारधी समुदाय की बाते यहां विस्तार में रखी जा रही हैं।

कंजर समुदाय

बिजोरी टपरा, बैरसिया भोपाल (गूंगा और बैरसिया थाना) व नई दिल्ली, राजगढ़ से आए कंजर समुदाय की महिलाओं और पुरूषों ने बताया कि पुलिस उन्हें कभी भी और कहीं से भी पकड़ लेती है।

हम लोग राशन खरीदने के लिए किराने की दुकान पर जाएं, सब्ज़ी खरीदने जाएं, आटा चक्की जाएं, या कपड़े खरीदने जाएं, पुलिस हमको वहीं से उठा लेती है और थाने ले जाती है। हम पर चोरी, डकैती, शराब, 25 आर्म्स एक्ट के केस लगा देती है। हमारे घरों में हसिया, फावड़ा, कुल्हाड़ी, सब्बल होते हैं तो उन्हीं को ज़ब्त कर 25 आर्म्स एक्ट लगा देती है। यदि किसी के पास गाड़ी होती है तो उसे चोरी का कह के ज़ब्ती बना देते हैं। यदि कोई गाड़ी के कागज़ दिखाता है तो पुलिस गाड़ी के कागज़ फाड़ देती हैं। महिलाओं के साथ बहुत ही बदतमीज़ी और गाली–गलौच के साथ बात करते हैं।

छोड़ने के लिए पुलिस दस हज़ार से लेकर पचास हज़ार रूपए तक की मांग करती है। पैसे नहीं देते तो अवैध शराब का या चोरी का केस लगाकर बंदकर देते हैं। कभी ज़्यादा केस लगाते हैं, फिर

पैसे लेकर एक दो केस लगाकर बाकी केस हटा लेते हैं। कभी ये कहकर ले जातें है कि पूछताछ के लिए बुलाया है और थाने ले जाकर बंद कर देते हैं। कई बार एक थाने से दूसरे थाने भेजते है, और कहते हैं कि वहां से छूटेंगे। हर थाने में वसूली की जाती है और फिर जेल भी भेज देते हैं।

केस 1 (बिजोरी टपरा, तरावली, बैरासिया भोपाल) – निरपत ने बताया कि जुलाई–अगस्त के महीने में उसे पुलिस ने उठाया था। हर रात को अलग–अलग थाने मे लेकर जाते थे और उल्टा लटका के मारपीट करते थे। मुझे पता ही नहीं चलता था कि किस रास्ते से कहां लेकर जाते थे। पुलिस वाले बोले कि दस हज़ार दोगे तो छोड़ देंगे नहीं तो चोरी का केस लगा देंगे। 8–10 दिन थाने में रखा और दस हज़ार रूपए लेकर छोड़ा।
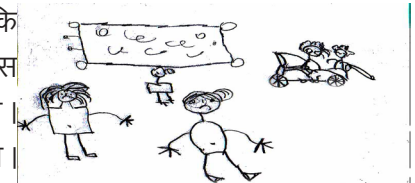
केस 2 (नरसिंहगढ़) – बारह बजे रात को आकर पुलिस घर की तलाशी लेती है अगर कुछ नहीं मिलता तो घर का सारा सामान तोड़ देती है। यदि मर्द घर में मिल जाते है तो उनको पकड़कर ले जातें हैं और शराब का केस लगा देते हैं। पैसे की मांग करते हैं; कहते हैं कि 1 लाख रूपए दे दो नहीं तो 8 साल के लिए भोपाल की जेल भेज देंगे। मेरे ऊपर दारु और दूसरे 34 केस लगाकर भोपाल की जेल भेज दिया था। एक महीने की लड़की मेरी गोद में थी। घरवालों ने इंदौर हाई कोर्ट से आर्डर लेकर आए और मुझे छुड़ाया। फिर मेरे पति को पकड़ लिया; उसे राजगढ़ की जेल में डाल दिया। उसको छुड़ाने में 50 हज़ार रूपए खर्च हुए हमारे ऊपर 4 लाख का कर्ज़ा है। हमारे यहाँ सभी लोगों पर 3–4 लाख का कर्ज़ा तो है ही।

> अब क्या सरकार पुलिस को तनखवा नहीं देती जो वे हमसे ही अपनी तनख्वा वसूलते है? पूरी ज़िन्दगी कोर्ट और थाने में बीत रही है। हमारे बच्चों का कोई भविष्य नहीं है। (ज्ञान देवी, नरसिंहगढ़)

पारधी समुदाय

पारधी समुदाय के लोगों ने भी अपने अनुभव सुनाए। बच्चों व महिलाओं ने बताया कि पुलिस उन्हें बीनते हुए, बाज़ार से, घर से, होटल से या काम से लौटते हुए, कभी भी पकड़ लेती है और छोड़ने के लिए पैसे की मांग करती है। पारधी समुदाय से पैसों की मांग 5 हज़ार से लेकर 3 लाख तक की वारदातें सामने आईं। बच्चों व महिलाओं व पुरुषों को गिरफ्तार करते समय और उसके बाद पुलिस लगातार कानून का उल्लंघन करती है।

छोटे छोटे बच्चों को आलपिन चुभाना, करेंट लगाने की धमकी देना, कान में पत्थर रख के दबाना, डंडों से मारना, पुलिस द्वारा बच्चों व बड़ों को डरा धमका कर अपराध कुबूल करने का दबाव बनाने की घटनाएं चित्रों व चर्चा के माध्यम से निकलकर आईं।

पुलिस पैसे वसूल करके बिना केस दर्ज़ किये लोगों को छोड़ देती है। लोग यह पैसा कर्ज़ लेकर पुलिस को देते हैं। बहुत परिवार कर्ज़ में डूबे हुए हैं, जिसे चुकाने के लिए परिवार के बच्चों और महिलाओं को ज़्यादा समय काम करके (बीनकर) पैसे कमाना पड़ता है।

कुछ उल्लंघन
किसी भी वक्त दरवाज़ा तोड़कर, छत को फाड़कर (चादर–पन्नी) घुसना
मारपीट करना,
बच्चों, महिलाओं, पुरुषों को घसीटकर ले जाना
महिलाओं के साथ थाने में आदमी पुलिस द्वारा छेड़छाड़,

बच्चों के साथ
रात के वक्त उठाना,
वर्दी में उठाना,
रात को थाने में रखना, ममारपीट करना,
कई–कई दिनों तक अलग–अलग जगहों पर बंधक बनाकर रखना,
मारपीट करके ज़बरदस्ती अपराध कुबूल करवाना
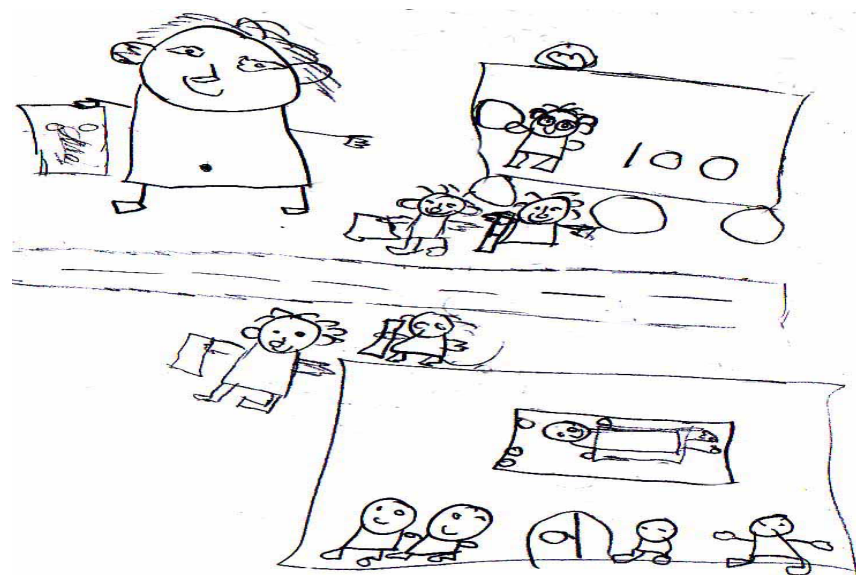
केस 1 (बंजारी बस्ती, भोपाल) – यह घटना एक साल पुरानी है। मुझे और मेरे पापा को चोरी के इल्ज़ाम में उठा लिया था। पापा पर 25 आर्म्स एक्ट लगा और मुझे थाने से ही छोड़ दिया। मुझे चोरी के शक में उठाया था। पापा को 3 दिन तक थाने में मारा। थाने से छूटने के बाद 6–7 दिन तक प्राइवेट हास्पिटल में इलाज कराया। एक लाख रूपए कमला नगर थाने में दिये और 20 हज़ार गाँधी नगर थाने में दिए। पुलिस को पैसा देने के लिए कर्ज़ लिया था जो की अभी भी चुका रहे हैं। *डर लगता है कब पुलिस उठा ले जाए, इसलिए में घर से दूर रहता हूँ।*

मेरी माँ को गेहूं काटते समय खेत से उठाया और डकैती का केस लगाया, थाने में माँ के साथ बहुत मारपिटाई की गई। उनका हाथ टूट गया। मुझे भी उसी सुबह घर से उठाया और मारपिटाई की, 7 दिन तक थाने में रखा। इस घटना के एक माह बाद मेरे पापा को उठाया। उन पर डकैती का केस लगाया। वे किसी रिश्तेदार के यहाँ बच्चे के जन्मदिन में शामिल होने गए थे, वहीं से उन्हें उठाया। थाने में इतना मारा कि उनकी दिमागी हालत खराब हो गई, दोनों पैरों के तलवे तवे की तरह काले हो गए; उनसे चलते भी नहीं बन रहा था। पुलिसवालों को 20,000 रूपए दिए पर उन्हें छोड़ा भी नहीं। अभी तक पेशी चल रही है।

केस 2 (राजीव नगर, भोपाल) – रात को एक बजे पुलिसवाले आए और घर की छत पर चढ़ गए। अंदर आदमी, औरत, बच्चे सो रहे थे। छत से पुलिसवाले घर के अंदर घुसे और दरवाज़े से आदमी को बाहर लाए और उसको थाने ले गए। थाने में बहुत दिनों तक रखा, उसकी पत्नी परेशान हो गई। बहुत मुश्किल से पैसे जोड़कर पुलिस को दिया तब उसके पति को छोड़ा। *दुनिया की सुरक्षा के लिए पुलिस होती है लेकिन हमारे लिए नहीं है।*
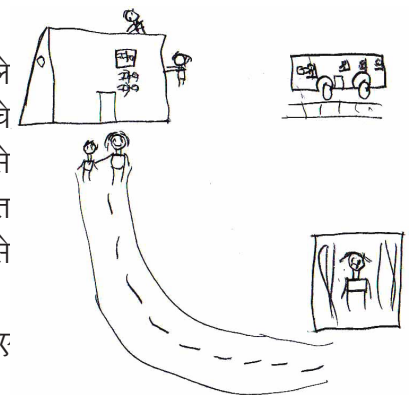
केस 3 (गाँधी नगर, भोपाल) – मेरे भांजे की पत्नी को अस्पताल में लड़का हुआ था, तो वो उनसे मिलने सरकारी अस्पताल जा रहा था। रास्ते में सिन्धी कॉलोनी से उसको पकड़ लिया। उस पर चोरी का केस लगाया। मेरी माँ और परिवार के लोग उसको छुड़ाने के लिए गए। उसके बच्चे की मौत हो चुकी थी। पुलिस को बताया कि उसे जाने दो साहब उसके बच्चे की मौत हो चुकी है लेकिन पुलिस ने उसे नहीं छोड़ा। फिर 10,000 रूपए लेकर छोड़ा।

केस 4 (राजीव नगर, भोपाल) – चार पुलिसवाले रात के 12 बजे आए और पति–पत्नी को उठाकर ले गए। पुलिस ने 40,000 रूपए की मांग की; पैसे नहीं देने पर सोने की चोरी का इल्ज़ाम लगा दिया और केस बना दिया। थाने में डंडे से मार–मार कर हरा कर दिया। फिर जज के सामने पेश किया। *हमारा एक ही पेट है उसी को पाल रहे है, पुलिस का पेट भी हम ही पाल रहे हैं।*

कोई लड़ाई झगड़ा हो जाये तो थाने मे रिपोर्ट तक नही लिखते। कहते है कंजरो की क्या रिपोर्ट लिखे, ठीक से बात नही करते कंजर करके बोलते है।

इन अनुभवों को सुनने के बाद समझ आता है कि इन समुदायों के मुख्य धारा समाज में जगह न बना पाने की एक बड़ी वजह पुलिस है। पुलिस द्वारा लगातार इन समुदायों के लोगों के मानव अधिकारों का लगातार हनन किया जाता है।

संविधान द्वारा दिए गए संवैधानिक अधिकारों का इनके लिए कोई औचित्य नहीं हैं।

कानूनन किसी के घर की तलाशी या गिरफ्तारी के लिए वारेंट होना जरूरी होता है परन्तु इन समुदायों के लिए इन कायदे कानून की कोई मतलब नहीं है, पुलिस खुले आम कानून का उल्लंघन करती है। पुलिस द्वारा रात ब रात 12 बजे, 2 बजे लोगों के घरों में दबिश दी जाती है, महिलाओं के साथ अभद्रता की जाती है।

पूरे प्रदेश में विमुक्त जातियों के ऊपर पुलिस के द्वारा किए जा रहे दमन में कोई फ़र्क दिखाई नहीं देता। पुलिस कर्मियों की शिकायत करने पर भी उनके खिलाफ कोई कार्यवाही नहीं होती है, इससे तो यह लगता है कि पुलिस विभाग के आला अधिकारियों को भी इस तरह कानून के उल्लंघन की मूक स्वीकृति और छूट होती है। ज़िंदगी के इन कड़वे अनुभवों के बाद उनके अंदर अपने अधिकारों के लिए लड़ने की हिम्मत खत्म नहीं हुई है। वे भी इंसान है, उनकी भी गरिमा व आत्मसम्मान होता है और वो इसकी लड़ाई लड़ रहे हैं यह उनके बताते हुए सामने आया।

संस्थानों के प्रतिनिधियों की टिप्पणी

विभिन्न सहभागियों ने शासन और अन्य संस्थानों के सामने अपने मुद्दे और कार्यशाला के डेर दिन के निचौड़ को रखा। लोगों को उम्मीद थी कि और बेचौनी भी कि अधिकारियों के माध्यम से उनकी ज़िन्दगी में बदलाव की उम्मीद रख सकते हैं।

बुजुर्ग और युवक, महिलाओं और पुरूष, ने नाटक और मौखिक तरीके से अतिथियों के सामने बात रखी। विभिन्न मुद्दों पर तैयार और प्रस्तुत किए गए, लेकिन वास्तविक जीवन जैसे घुलते मिलते सामने आए।

अतिथियों की टिप्पणियां यहां प्रस्तुत की जा रही हैं –

अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति की श्रेणी

राघवेन्द्र शर्मा जी ने अपने वक्तव्य में कहा कि अलग अलग जिलों में भी अलग अलग जातियों को अलग अलग कैटिग्री में दिया है। वैसे ही प्रजापति उज्जैन में एस.सी. दिया है और राससेन में ओ.बी.सी. में आता है। ये सारी दिक्कते तो हैं। जो जिले जहां शामिल हुए, वैसा ही चलता रहा। सरकार इस पर विचार कर रही है। बहुत जल्द यह सब ठीक किया जाएगा। हम इस पर बात ज़रूर रखेंगे।

इन्सान जिस कैटिग्री में आता है, उसका प्रमाण पत्र उसके हाथ में हो, यह उसको मौलिक अधिकार तो है ही।

स्कूलों की मुश्किलें

यूनिसेफ से आए श्री जामी ने कहा कि उन्होंने विमुक्त जातियों के बच्चों के बारे में इस बैठक के दौरान समझने को मिला है। उन्होंने कहा कि यूनिसेफ सरकार के साथ मिलकर काम करती है और ि{ाा विभा• के साथ उनके काम में वो टीचर–विद्यार्थी रिश्तों पर भी महत्व देंगें। टीचर मारते हैं, अलग तरह से व्यव्हार करते हैं, पीछे बैठते हैं और किन किन तरीकों से कक्षा में भेद–भाव होता हैं, वो कक्षा में किसी भी बच्चे के साथ, पारधी और कंजरों के साथ ज़्यादा होता है। शिक्षक भी उसी समाज से हैं जहाँ ये धारणाएं बनी हुई हैं और शिक्षकों कों समझाने की जरूरत है कि अगर बच्चों को साथ लेकर चलना है, तो यह दुर्वयव्हार बदलना होगा। टीचर ट्रेनिंग में यह बात आनी होगी कि इन समूहों के बच्चों को आगे कैसे ले जाया जाए। शिक्षा का अधिकार सभी बच्चों का हक है लेकिन बहुत बच्चों को यह हक नहीं मिल रहा है।

चर्चा उठी कि इन धारणाओं को समाज से नहीं जोड़ना चाहिए क्योंकि समाज का हर इंसान एक जैसा नहीं है, जैसे शायद कोई स्वर्ण इंसान शुद्र के लिए संवेदनशील होता है। इस पर वाजिब प्रतिक्रिया थी कि समाज में व्यापकता से फैले हुए गैर–बराबरी और पूर्वाग्रहों में समाज का एक समूह दूसरे समूह के लिए उपयोग करता है। अतैव यह बोलना सही होगा कि मोटे तौर पर समाज के एक (स्वर्ण मुख्यधारा) समूह में दूसरे (दलित, आदिवासी, विमुक्त जनजातियों) के प्रति नकारात्मक धारणाएं हैं। इसको स्वीकार ही इसको बदलने का सोचा जा सकता है। हम इसको अनदेखा नहीं कर सकते।

किसी भी भाषा का तिरस्कार संविधान और शिक्षा नीति के खिलाफ है। सब की भाषाओँ को स्कूल में जगह मिले और किसी की भी भाषा को 'बोली' का दर्जा देकर नीचे नहीं करना चाहिए। हम लोग मान कर चलते हैं कि सबको हिंदी समझ आती हैय हमारी पुस्तकें हिंदी में बनती हैं और बातचीत भी हिंदी में अपेक्षित रहती है। इसके ऊपर विमुक्त जनजाति विभाग और आदिवासी विभाग के साथ भी शुरू होनी चाहिए।

स्कूलों में हो रही हिंसा के ऊपर और लोगों से यह टिप्पणी आई कि बच्चों इतनी जल्दी मायूस होकर पीछे हट जाते हैं। स्कूलों में मार तो होती ही है और मार खाकर ही सीखते हैं – यह राय कई बार समुदाय के वयस्कों के साथ साथ हम जैसे लोगों से आती है।

हम को लोगों के अनुभव और वास्तविकता को पहचानना और स्वीकारना ही होगा। जो बच्चे स्कूल छोड़ चुके हैं, उनके इतिहास पर उन्हें वापस दोषी ठहराना न कि ऐसा सोचना कि हम बड़ों को क्या करना चाहिए, एक बड़ी मुश्किल है। स्कूलों से बच्चों को 'बाहर धकेले जाने' की परिकल्पना को हम लोग को अपने मन में और स्थापित करनी चाहिए ताकि हम परिस्थितियों को बदलने की भूमिका को और अच्छे से पूरा कर सके।

विमुक्त जाति विभाग से आए डिप्यूटी डायरेक्टर ज़ैदी जी ने कहा कि बैरागढ़ स्कूल में बच्चों के साथ हुए लैंगिक शोषण की शिकायत बहुत गम्भीर है। उनके विभाग तक ऐसी घटनाओं से जुड़ी शिकायतें जल्द से जल्द आ जानी चाहिए।

योजनाएं

ज़ैदी जी ने बताया कि सरकार की बहुत योजनायें हैं; क्या क्या योजनाएं हैं सरकार की, उनकी जानकारी लेकर उनका फायदा उठाएं लोग। ऐसी 30 योजनाएं होंगी जिनसे काफी मुश्किलों पर कार्यवाही हो सकती है।

राघवेन्द्र जी ने भी इस मुद्दे पर जोड़ा कि लोगों को फायदा नहीं मिल रहा क्योंकि पता नहीं है लोगों को उनके योजनाओं के बारे में। अलग अलग तारीख पर कैम्प लगाए और विभाग के लोग आ जाएंगे तो हम वहां बैठकर बात करेंगे तो कुछ न कुछ तो हल किन्हीं बातों का मिलेगा।

शासन की व्यापक पहुंच को साबित करने के लिए यह बोला गया कि लोगों के पास आधार कार्ड बने हुए हैं। यहां यह बात भी गौर देने की है कि यह एक दस्तावेज जीवन नहीं बदल रहा। शासन की सफलता नुमा उदाहरण में यह बात भी आई कि राशन कार्ड तो हैं। यह सही है कि बहुत लोगों के पास हैं लेकिन कहीं वो भी गिरवी है और नए परिवारों का अलग बनने में बहुत मुश्किले हैं। इसके सिवाय, राशन कार्ड भी एक अधिकार है जो लगातार सिंकोड़ा जा रहा है। ये अधिकार दूसरे अधिकारों से कम या ज़्यादा नहीं है और एक पूरी स्थिति में एक हिस्सा ही रह जाते हैं।

पुलिस द्वारा हो रहे अत्यचार

मानव अधिकार आयोग के अध्यक्ष श्री मनोहर मतानी ने अपनी बात में कहा कि यदि पुलिस ने ऐसा दुर्व्यवहार किया है तो बहुत ही गलत और बड़ा अपराध है। ऐसा व्यवहार आज देश में स्वीकार्य नहीं है।

राघवेन्द्र जी का कहना था कि सभी पुलिसवाले ऐसे नहीं होते जिनको आपको परेशान करने में मज़ा आता है। आप उन लोग को आपके बीच बुलाइए, मीटिंग करिए। जैसे आप लोग कह रहे कि आपके समाज में कुछ ही लोग गरबर करते हैं; वैसे ही हमारे बीच, पुलिस में, सरकार में, काफी लोग होते हैं जो अच्छा काम करना चाहते हैं।

आर्थिक मुश्किलें

लोगों ने अपनी आर्थिक परेशानियों बताईं और कहा कुछ भी ठीक से काम मिल जाए तो वो करना

चाहते हैं। उनको शराब बेचना या कबाड़ बीनने के प्रति कोई ऐसा जुड़ाव नहीं है, लेकिन कोई और विकल्प ही नहीं है। रायगढ़ की महिलाओं ने शासन से कर्ज़ा माँगा कि पुलिस को देने के लिए मजबूरन लिया गया कर्ज़ा ब्याज–दर के कारण बहुत महेंगा साबित होता है और लौटाना असंभव हो गया है तो सरकार कर्ज़ा दे दे तो धीरे धीरे वो चुका भी पाएँगे।

उपस्थित अथिति–गण का इसका कोई पक्का जवाब नहीं था। योजनाओं का फायदा ले सकें और नरेगा (राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना) में भी जुड़ने की सिफारिश दी गयी। लेकिन चुनौती यह है कि शहर में रोज़गार गारंटी योजना नहीं है और सभी ग्रामीण क्षेत्रों में भी नहीं है।

फिर भी विमुक्त जातियों को इससे खास जोड़ने के लिए रास्ते देखने होंगे। विमुक्त जाति आयोग ने इस सन्दर्भ में विभिन्न सिफारिशें दीं हैं और उनको भी शासन को अपने कार्यप्रणाली में जगह देनी चाहिए।

समाज में पूर्वाग्रह और भेदभाव

मानव अधिकार आयोग से श्री मनोहर ममतानी जी ने कार्यशाला में शामिल सहभागियों को संबोधित करते हुए बोला कि जो ठप्पा आपके ऊपर लगा है, वो हटना ही चाहिए। जो लोग आज भी ऐसा मानते हैं कि कोई विशेष जाति चोर है, लुटेरे हैं, वो बहुत गलत हैं। कैसे आपको जन्म से ही अपराधियों की श्रेणी में रखा जा रहा है। संविधान की बात करें तो आपके और अन्य नागरिक के बीच में कोई भेद–भाव नहीं। सब सामान हैं। सब को बराबर अधिकार हैं। सब की स्वतंत्रता एक जैसी है।

सभी मुद्दों पर अलग से भी अध्ययन करेंगे और इस कार्यशाला के रिपोर्ट के आधार पर प्रत्येक मुद्दे को सम्बंधित विभाग के साथ फॉलो–अप करेंगे। उन्होंने सभी को आश्वस्त किया कि किस विभाग से क्या कार्यवाही हो सकती है, वो उसके लिए प्रतिबद्ध रहेंगे।

सहभागियों से फीडबैक

दूसरे दिन की शुरुआत में ही पहले दिन का फीडबैक ले पाए और फिर पूरी कार्यशाला के बाद फीडबैक लेने का वक्त नहीं मिला।

लखा ने बोला कि सात साल से एक ही स्कूल में हूँ लेकिन दोस्त नहीं बन पाए लेकिन यहाँ इस जगह में एक ही दिन में दोस्त बना पाया हूँ।

एक और युवा साथी ने बोला कि जब मीटिंग की जगह में आ रहा था तो सोच रहा था यहाँ दो दिन तक कैसा वक्त जाएगा। मन में अलग अलग शंकाएं थी। लेकिन अब अगली बार आने में कोई चिंता नहीं।

किसी ने कहा कि हम जल्दी गाँव वापस जाने का सोचे थे लेकिन फिर सब देखकर रुक ही गए। रात को भी बहुत अपनी बातें बताईं।

इस जगह में सब लोग अपनी ज़िन्दगी सामने रखने में कोइ झिझक नहीं थी क्योंकि सब सुनकर समझ रहे थे।

सहभागियों ने प्रक्रिया और माहौल को बहुत सराहया। सुबह के वन विहार के भ्रमण पर भी टिप्पणी मिली। साठ साल से ऊपर जत्तू दादा ने बोला ज़िन्दगी में पहली बार शेर देखा। शुरू में अठन्नी–चवन्नी खेल में सब इकट्ठे होते खुल गए थे जबकि पहले शर्मा रहे थे।

इस तरह के सकरात्मक अनुभवों के बीच में यह दो दिन गुज़र गए जिसमें सबको एक दूसरे को जानने समझने का मौका मिला और इकट्ठे अपनी परिस्थितियों को बदलने के लिए नई दिशाएं मिलीं।

सहभागियों की सूची

क्र.	सहभागी का नाम	उम्र	पता
1.	संगीता बाई	40	राजीव नगर, भोपाल
2.	शिवानी	18	राजीव नगर, भोपाल
3.	बृजेश	20	दोराहा गांव, भोपाल
4.	तस्वीर	20	राजीव नगर, भोपाल
5.	गीता पवार	50	गांधीनगर, भोपाल
6.	दीनू	40	गांधीनगर, भोपाल
7.	कईमल	47	गांधीनगर, भोपाल
8.	राजपवार	17	गांधीनगर, भोपाल
9.	सुरसैन	15	गांधीनगर, भोपाल
10.	अजय	17	गांधीनगर, भोपाल
11.	नरेन्द्र	18	गांधीनगर, भोपाल
12.	पंजाब सिंह	22	गांधीनगर, भोपाल
13.	करन	12	गांधीनगर, भोपाल
14.	संजय	12	गांधीनगर, भोपाल
15.	संदीप	11	गांधीनगर, भोपाल
16.	चिराग	12	गांधीनगर, भोपाल
17.	मौनसिंग	28	बिजोरी टपरा, बैरसिया
18.	गनपत	50	बिजोरी टपरा, बैरसिया
19.	सुरेश	45	बिजोरी टपरा, बैरसिया
20.	मुनिया बाई	38	बिजोरी टपरा, बैरसिया
21.	इमरती बाई	40	बिजोरी टपरा, बैरसिया
22.	रज्जु जी	60	बिजोरी टपरा, बैरसिया
23.	संतोष	26	बिजोरी टपरा, बैरसिया
24.	पप्पू	12	ईश्वर नगर, भोपाल
25.	आरती	17	सूरजनगर, भोपाल
26.	सुमन	17	सूरजनगर, भोपाल
27.	सीमा	19	सूरजनगर, भोपाल
28.	निकिता	13	बंजारी बस्ती, भोपाल
29.	शीतल	14	बंजारी बस्ती, भोपाल
30.	रंगेशपाल	16	बंजारी बस्ती, भोपाल
31.	राजेश	30	बंजारी बस्ती, भोपाल
32.	अभिषेक	19	एहसान नगर, भोपाल
33.	वंदना	18	एहसान नगर, भोपाल
34.	प्रिया	14	एहसान नगर, भोपाल
35.	रिसवा	17	एहसान नगर, भोपाल
36.	जितेन्द्र	16	ईश्वर नगर, भोपाल
37.	अर्जुन	14	ईश्वर नगर, भोपाल
38.	भीमा	20	ईश्वर नगर, भोपाल
39.	लखन	18	ईश्वर नगर, भोपाल
40.	केदार बिजोरी	.	बिजोरी टपरा, बैरसिया
41.	ज्ञान सिंग		बिजोरी टपरा, बैरसिया
42.	प्रमोद		बिजोरी टपरा, बैरसिया
43.	पन्टु	24	बिजोरी टपरा, बैरसिया
44.	सुरेन्द्र	28	बिजोरी टपरा, बैरसिया
45.	विरेन्द्र	25	बिजोरी टपरा, बैरसिया
46.	चौहान	22	बिजोरी टपरा, बैरसिया
47.	निरपत	21	बिजोरी टपरा, बैरसिया
48.	अनिता	40	नई दिल्ली, नरसिंगगढ़
49.	कलाबाई	39	नई दिल्ली, नरसिंगगढ़
50.	सगपते बाई	60	नई दिल्ली, नरसिंगगढ़
51.	संगीता	40	नई दिल्ली, नरसिंगगढ़
52.	सीमा	30	नई दिल्ली, नरसिंगगढ़
53.	ज्ञानदेवी	35	नई दिल्ली, नरसिंगगढ़
54.	जत्तू	60	बिजोरी टपरा, बैरसिया
55.	गनपत	35	बिजोरी टपरा, बैरसिया
56.	अखिलेश		बिजोरी टपरा, बैरसिया
57.	बिन्दोबाई		बिजोरी टपरा, बैरसिया
58.	राज कपूर	50	झिरी, हरदा
59.	पदम सिंग		करिया सांसी
60.	रमनी	30	सम्वेदना संस्था
61.	गीता नट	32	गांधीनगर, भोपाल
62.	बासू	24	बंजारी बस्ती, कोलार रोड, भोपाल

विशेष अतिथि
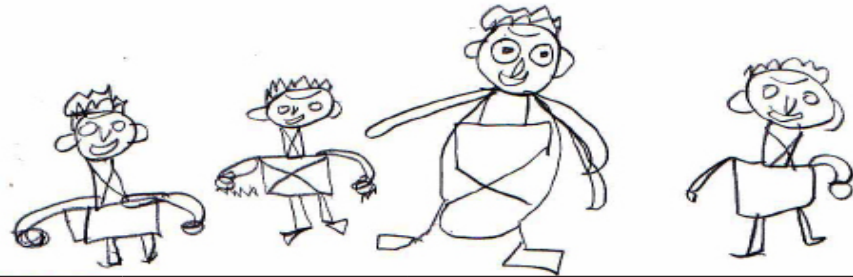
क्र.	नाम	पद	संस्थान
1.	राघवेन्द्र शर्मा	अध्यक्ष	राज्य बाल अधिकार सरंक्षण आयोग
2.	एस. एच. एम. जैदी	डिप्टी डारेक्यटर	डीएनटी विभाग
3.	मनोहर ममतानी	चेयरमेन	मध्य प्रदेश मानव अधिकार आयोग
4.	एस. ऐ. जामी	शिक्षा अधिकारी	यूनीसेफ
5.	श्री लोलीचेन पी.जे.	बाल संरक्षण अधिकारी	यूनीसेफ
6.	अदवैता मराठे	सलाहकार	यूनीसेफ

आयोजक समूह – व्यवस्थाएं, सम्पर्क, सहजकर्ता, दस्तावेजीकरण

क्र.	नाम	क्र.	नाम
1.	कमल किशोर	11.	बाली जगत
2.	गीता धुर्वे	12.	माया मौर्य
3.	चाँदनी जगत	13.	महेश झरबरे
4.	ज्योती देशमुख	14.	दर्री
5.	दीपक नायडे	15.	रूची श्रीवास्तव
6.	नीतू	16.	शशि
7.	नीलम	17.	शिवानी
8.	पल्लव थुडगर	18.	सीमा देशमुख
9.	ब्रीज़ त्रिपाठी	19.	सविता सोहित
10.	बृजेश वर्मा	20.	सुजाता घोठोस्कर

सत्र की रूप रेखा

पहला दिन			
समय	सत्र	युवाओं और वयस्कों के साथ सत्र	अलग / साझे
10 से 11:45	परिचय	गीत – हल चला के खेतों को	साझे
		कार्यशाला का उद्देश्य	साझे
		अठन्नी चवन्नी खेल	साझे
		जगह–वार–15 जगहों से प्रस्तुति अपनी समाज परम्परा या अपनी पहचान से जुड़ी कोई एक चीज सोचकर / यादकर एक – दो प्रतीक का चित्र बनाएंगे और व्यक्तिगत नाम के परिचय	साझे
11:45 से 12:15	बदलाव के आयाम हमारे गाँव	हमारे गाँव – मौहल्ले में, और हमारे समाज में गए दस सालों में कैसे बदलाव दिखते हैं.. हमारे समाज में भी कैसे बदलाव आये हैं .. कौनसी चीजें अच्छी होने लगी हैंय कौनसी थोड़ी खराब अब कुछ बातों को और खोलकर समझेंगे आगे के सत्रों में)	साझे
12:30 से 1:45	शिक्षा की स्थिति	युवाओं – शिक्षा सम्बन्धी सत्र वयस्कों – शिक्षा व्यवस्था और पूर्वाग्रह सम्बन्धी सत्र	अलग
2:30 से 3:15	शेयरिंग	युवाओं की नाटक शेयरिंग और वयस्कों की पूर्वाग्रह सत्र की शेयरिंग	साझे
3:15 से 3:30		गीत या अन्य कोई गतिविधि	
3:30 से 5	समाज में पितृसत्ता और बराबरी के पहलु	समूह–वार चर्चा उम्र–वार, महिला–पुरुष के अलग समूह और जाति–वार भी अलग अलग समूह (जहाँ कम संख्या हो रही है तो दो जातियों को मिलकर एक समूह) संभवतः 8 समूहों में चर्चा –पारधी के ३ समूह, बिजोरी, लोहार, नट, सपेरा अलग अलग	अलग अलग
5 से 6 बजे	विजिट	शाहपुरा झील	साझे
6:30 से 8 बजे	पुलिस और समाज के बीच की स्थितियां	फिल्म समूह–वार चर्चा और वारदात लेखन / ड्राइंग (वयस्क और युवा इकट्ठे हो जाए लेकिन महिला–पुरुष अलग अलगय जातियां भी मिक्स हो जाएँ) महिला–पुरुष वार	महिला–पुरुष वार

दूसरा दिन			
समय	सत्र	युवाओं और वयस्कों के साथ सत्र	अलग/साझे
सुबह 6 से 7:30	वन विहार	जिसका मन हो	उतने लोग जल्दी समय पर उठ जाए
9:15 से 10:30	गीत/ रीकेप	पिछले दिन की शेयरिंग और छूटी हुई बातों पर काम करना	
10:30 से 11:30	आगे की योजना	सकरात्मक ताकतें – कैसे आगे बढ़ पाएं हैं और बढ़ पाएँगे	सहभागियों के बीच
11:30 से 1		प्रस्तुति की तैयारी (मिक्स्ड समुह) सामुदायिक गीत और कहानियां (मिक्स्ड समुह)	तीन समूहों में
2 से 2:20	आगे की योजना	स्वागत कार्यशाला का उद्देश्य और सारांश	
2:20 से 3		*कार्यशाला के सहभागियों के निष्कर्षों की प्रस्तुतियां* शिक्षा की प्रस्तुति भेद–भाव और नकारात्मकता का इतिहास और अनुभव शासकीय अधिकारीयों के सवाल	नाटक पोस्टर प्रस्तुति मौखिक
3 से 4		*वर्तमान स्थितियों पर टिप्पणी और आगे की तरफ रास्ते* बाल अधिकार आयोग की तरफ से मानव अधिकार आयोग की तरफ से विमुक्त, घुम्मकड़ और अर्द्ध–घुम्मकड़ जाति विभाग यूनिसेफ से	
4 से 4:45		सहभागियों के सवाल – जवाब	खुल्ला मंच
4:45 से 5	समापन	हमारी कुछ उम्मीदें फीडबैक और शुक्रिया	

विभिन्न अधिकार देनेवाले कानूनों के माहौल में देश के सबसे हाशिएकृत समुदाय कितना आगे बढ़ पा रहे हैं। इसी को मध्य प्रदेश स्तर पर समझने के लिए विमुक्त जातियों के युवा, बुज़ुर्ग और बच्चों के बीच दो दिवसीय कार्यशाला रखी गई थी।

सीधा लोगों के साथ चर्चाओं से समझ आता है कि सामुहिक तौर पर विमुक्त जातियों की अगली पीढ़ी अपने ऐतिहासिक बोझ से मुक्त नहीं हो पा रही है। व्यवस्थाएं अभी भी इनके खिलाफ ही कार्यरत हैं।

यूनीसेफ के सहयोग से की गई इस कार्यशाला का यह प्रतिवेदन है।

मुस्कान

मुस्कान
मिट्टी का घर,
प्लॉट नं 264–65, नीलबड़, भदभदा रोड,
भोपाल 462044
ईमेल – muskaan.office@gmail.com